99

भारत सरकार

विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय

सत्यमेव जयते

भारत का विधि आयोग

निन्यानवीं रिपोर्ट

उच्चतर न्यायालयों में मौखिक और लिखित तर्क

अप्रैल, 1984

विषय-सूची

अध्याय	पृष्ठ
1. परिचायक	1
2. मौखिक तर्क (जबानी बहस) को सीमित करना . .	3
3. मौखिक तर्क के आंशिक बदले में लिखित पक्षसार (ब्रीफ) .	10
4. विशेष मामलों में मौखिक तर्क की पद्धति समाप्त करना .	17
5. सिफारिशों का संक्षेप	21
परिशिष्ट	23

1—221 LAD/84

अध्याय 1

परिचायक

1.1. भारत के विधि आयोग ने कुछ समय पहले उच्चतर न्यायपालिका के संगठन और कार्यकरण से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण विषयों से हितबद्ध व्यक्तियों और निकायों की राय जानने के लिए एक विस्तृत प्रश्नावली प्रकाशित की थी[1]। उस प्रश्नावली में जो प्रश्न पूछे गए थे उनका संबंध अनेक विषयों से था जिनकी यहां चर्चा करना आवश्यक नहीं है। इतना ही उल्लेख कर देना पर्याप्त है कि उनमें से तीन प्रश्नों का संबंध उच्चतर न्यायालयों में मौखिक और लिखित तर्क (बहस) से था। इस रिपोर्ट में इस विषय पर आयोग की सिफारिशें दी गई हैं जो प्रश्नावली के उत्तर में प्राप्त विचारों और सुसंगत सामग्री पर ध्यान देकर तैयार की गई हैं। मूल रूप।

1.2. उपर्युक्त पैरे में निर्दिष्ट प्रश्नावली में विचारणीय प्रश्न निम्नलिखित रूप में तैयार किए गए थे :— विचारणीय प्रश्न-प्रश्नावली के प्रश्न 21-22 और 23।

"प्रश्न 21–22 यदि प्रत्येक पक्ष की ओर से अपना मौखिक तर्क (जबानी बहस) प्रस्तुत करने का समय केवल आधे घंटे तक सीमित कर दिया जाए तो क्या इससे अधिक संख्या में मामलों का निपटारा किया जाना सुगम हो सकता है ?"

"प्रश्न 22 क्या काउन्सेल को इस बात के लिए बाध्य करने के लिए कि वह अपना लिखित पक्षसार (ब्रीफ) फाइल करें कोई प्रक्रिया अपनायी जाने से मौखिक तर्क कम हो जाएंगे ?"

"प्रश्न 23 क्या मौखिक तर्क को सुने बिना कुछ अपीलों का निपटारा किया जाना चाहिए ?"

1.3. हम इन प्रश्नों पर प्रकट किए गए विचारों का सारांश समुचित स्थान पर देंगे[2]। यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि उपर्युक्त प्रश्नों पर विचार जानने का मुख्य उद्देश्य आयोग को यह विचार करने के लिए समर्थ बनाना था कि यदि मौखिक तर्क प्रस्तुत करने का समय कम कर दिया जाए तो क्या इससे उच्चतर न्यायालयों को प्रत्येक कार्य दिवस में अधिक संख्या में मामलों की सुनवाई करना संभव हो जाएगा ? ऐसी कमी करना स्वतः एक उद्देश्य नहीं था। इसका आशय संख्या की दृष्टि से अधिक मामलों का निपटारा सुनिश्चित करना था। आयोग ने इन प्रश्नों को पूछने में संख्या के पहलू—अधिक मात्रा में निपटारा किए जाने के पहलू—के अलावा एक और पहलू को भी ध्यान में रखा था जो इसी के समान महत्वपूर्ण है। आयोग यह चाहता था कि सर्वसाधारण को इस प्रश्न की जानकारी होनी चाहिए कि क्या ऐसी पद्धति शुरू करने से मामले को पेश करने की क्वालिटी में सुधार हो सकता है जो लिखित रूप में तर्क प्रस्तुत करने की वह पद्धति हो जिसमें किसी पक्षकार का मामला संक्षेप में किन्तु यथार्थ रूप से और सुसंगत (केवल सुसंगत) नजीरों और सामग्री के साथ प्रस्तुत किया जाए। जांच के उद्देश्य।

1.4. आयोग द्वारा प्रकाशित प्रश्नावली में से उपर्युक्त जिन प्रश्नों[3] में यद्यपि एक ही समस्या के तीन भागों की चर्चा है फिर भी उनमें एक सामान्य विषय है, अर्थात् उच्चतर न्यायपालिका के समक्ष मामला पेश करने के तरीके में सुधार करना और पेश करने का ऐसा सर्वोत्तम तरीका निकालना जो शीघ्र और कारगर न्याय प्रदान किया जाना सुनिश्चित करे और उच्चतर न्यायालयों को न्यायनिर्णयन का कार्य कारगर रूप से करने के लिए समर्थ बनाए और इसके साथ सामान्य विषय।

---

1. 1981 में प्रकाशित प्रश्नावली।
2. आगे अध्याय 2, 3 और 4।
3. पिछला पैरा 1.2।

2—221 LAD/ND/84

ही मुकदमा लड़ने वालों तथा उनके काउन्सेल को इस बात के लिए प्रेरणा दे और उसका यह विश्वास बनाए रखे कि उनके मामले में न्याय किया गया है।

प्रश्नावली के बारे में प्राप्त विचार।

1.5. इस बात पर संदेह नहीं किया जा सकता कि ऊपर जो उद्देश्य बताया गया है उसे प्राप्त करना आसान नहीं है और आयोग ने यह आशा भी नहीं की थी कि प्रश्नावली के बारे में जो विचार प्रकट किए जाएंगे उनमें एक ही तरह का दृष्टिकोण अपनाया जाएगा या सभी विचार वर्तमान पद्धति में दूरगामी परिणाम वाले किन्हीं परिवर्तनों का समर्थन करेंगे या उन्हें इंकार कर देंगे। जो राय प्राप्त हुई है वह भिन्न-भिन्न हैं और उनके एक ही प्रकार की नहीं बल्कि अनेक प्रकार की भिन्नताएं हैं[1]। किन्तु आयोग उन सब का आभारी है जिन्होंने अपना बहुमूल्य समय देकर प्रश्नावली का उत्तर भेजा है और विवाद्यकों पर चिंतन करने का तथा आयोग के फायदे के लिए अपने विचारों को लिखने का कष्ट उठाया है।

प्रश्नावली के अन्य प्रश्न।

1.6. इस परिचायक अध्याय को समाप्त करने से पूर्व यह उल्लेख कर देना समुचित प्रतीत होता है कि प्रश्नावली में सम्मिलित कुछ अन्य प्रश्नों या उनसे उत्पन्न प्रश्नों[2] के बारे में आयोग ने अलग-अलग रिपोर्ट तैयार की हैं।

---

1. उदाहरण के लिए आगे पैरा 2.3 देखिए।
2. उदाहरणार्थ लिटीगेशन बाई एण्ड एगेंस्ट दि गवर्नमेंट। उच्चतम न्यायालय में संवैधानिक खण्ड सृजित करने के प्रस्ताव संसंबंधित रिपोर्ट को भी देखिए।

अध्याय 2

मौखिक तर्क (जबानी बहस) को सीमित किया जाना

प्रश्नावली का सामान्य विषय ।

2.1. यह रिपोर्ट जिन तीन प्रश्नों के संबंध में है और जिनके पाठ पहले ही उध्दृत कर दिए गए हैं[1], उनका क्रमशः संबंध मौखिक तर्क (जबानी बहस) करने में लिए जाने वाले समय को कम करने (प्रश्न 21) मौखिक तर्क सुने जाने को एकदम समाप्त कर दिया जाना (प्रश्न 22) और मौखिक तर्क के बदले में लिखित तर्क देना (प्रश्न 23) से हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है,[2] उनका सामान्य विषय उच्चतर न्यायालयों के समक्ष मामले पेश किए जाने के तरीके में सुधार करना है। इस प्रस्तावनात्मक टिप्पणी के साथ अब हम विवादग्रस्त प्रश्नों पर प्रकट किए गए विचारों का सारांश संक्षेप में आगे बता रहे हैं।

2.2. हम पहले प्रश्न 21 की चर्चा करेंगे जिसमें इस प्रश्न पर राय मांगी गई थी कि यदि प्रत्येक पक्ष की ओर से मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के समय की सीमा आधा घंटा निश्चित कर दी जाए तो क्या इससे अधिक संख्या में मामलों का निपटारा किया जाना सुगम हो जाएगा ?

प्रश्न 21 के बारे में गहरा मतभेद ।

2.3. प्रारंभ में ही यह कह देना चाहिए कि प्रत्येक पक्ष की ओर से मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के समय के लिए आधा घंटे की सीमा निर्धारित करने के प्रश्न के जो उत्तर प्राप्त हुए हैं उनमें गहरा मतभेद है। मोटे तौर पर कह सकते हैं कि इस प्रश्न के बारे में तीन तरह के विचार हैं। पहले तो वे लोग हैं जो समय की कोई सीमा निश्चित करने के पक्ष में हैं (किन्तु इनमें से कुछ उत्तरों में यह बात भी कही गई है कि लिखित तर्क प्रस्तुत करने की इजाजत मिलनी चाहिए)। दूसरे, वे लोग हैं जो इस संबंध में कोई भी परिवर्तन करने का दृढ़ता से विरोध करते हैं। वे मौखिक तर्क प्रस्तुत करने पर समय की कोई सीमा लगाना नहीं चाहते। तीसरे वे लोग हैं जिन्होंने अपने उत्तर में मध्यम मार्ग अपनाया है। वे यह मानते हैं कि मौखिक तर्क के लिए समय की कोई सीमा होनी आवश्यक है। किन्तु वे इस संबंध में गठित कोई पक्का नियम लागू करके समय की सीमा निश्चित कर देना नहीं चाहते। वे इस बात को न्यायाधीश पर छोड़ देते हैं कि वह इस तथ्य का ध्यान रखकर कि प्रत्येक मामले में कितना समय देना उचित है उतना समय दे सकता है किन्तु इसके लिए उसे कई बातों पर ध्यान देना आवश्यक है जैसे कि मामले की जटिलता, विवाद्यकों का स्वरूप कितना साक्ष्य है और वह किस प्रकार का है, काउन्सेल और न्यायाधीश की क्षमता और इसी तरह की अन्य बातें भी।

हमारा यह आशय नहीं है कि हम ऊपर वर्णित प्रवर्गों में से प्रत्येक प्रवर्ग के अंतर्गत आने वाले उत्तरों की ठीक ठीक संख्या गिनती करके बताएं किन्तु हम यहां जानकारी देने के रूप में यह बता देना चाहते हैं कि मोटे तौर पर पहले और दूसरे प्रवर्गों में उत्तर बराबर बराबर संख्या में आए हैं। मध्यम मार्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले तीसरे प्रवर्ग में आने वाले उत्तर थोड़े हैं किन्तु उनकी भी संख्या काफी है।

विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों के उत्तर में मतभेद ।

2.4. जैसा कि ऊपर कहा गया है विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों के उत्तर में मतभेद प्रकट होता है और ऐसा प्रतीत होता है कि व्यावसायिक तथा अन्य वर्ग के व्यक्तियों ने एक दूसरे वर्ग के अनुसार अपना मत प्रकट किया है और अपने वर्ग की बात नहीं कही है। ऐसे उत्तर विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों से प्राप्त हुए हैं। उदाहरण के लिए, उच्चतम न्यायालय के जिन सेवा-निवृत्त न्यायाधीशों के विचार उपलब्ध हैं उनमें से एक न्यायाधीश ने मौखिक तर्क असीमित समय तक चलते रहने की आलोचना

1. पिछला पैरा 1.2।
2. पिछला पैरा 1.4।

की है तो एक दूसरे न्यायाधीश ने मौखिक तर्क के लिए कोई समय-सीमा निर्धारित करने का विरोध किया है। इस दूसरे न्यायाधीश का विचार यह है कि मौखिक तर्क के लिए समय की सीमा किसी विशेष मामले की प्रकृति पर निर्भर करता है और इसके लिए कोई पक्का नियम निश्चित नहीं किया जा सकता। वह "न्यायालय की कार्यवाहियों में समय की राशनिंग करने" के पक्ष में नहीं हैं।

हम फिर यह बता दें कि उच्च न्यायालयों के सेवानिवृत्त और पीठासीन न्यायाधीशों में से कुछ न्यायाधीश इस समय सीमा के पक्ष में है[1]। (किन्तु वे विशेष मामलों में समय की छूट देने के भी पक्ष में हैं) और कुछ अन्य न्यायाधीश समय सीमा को बहुत ही असाध्य मानते हैं।[2] हम विधिज्ञ वर्ग (बार) के सदस्यों की राय भी बता देना चाहते हैं। इनमें से श्री एच० एम० सीरवाई उपयुक्त प्रश्न में प्रकट किए गए विचार के सख्त खिलाफ।[3] तर्क (बहस) के लिए समय की सीमा होने से न्यायिक पद्धति को फायदा हो सकता है किन्तु इसे गणित के अनुसार निश्चित नहीं किया जाना चाहिए।

इसी प्रकार संयुक्त वकील संघ (यूनाइटेड लायर्स एसोसिएशन), नई दिल्ली इस बात से सहमत हैं कि यदि मौखिक तर्कों से लिखित तर्क की अनुपूर्ति होती है तो मौखिक तर्क सीमित किए जा सकते हैं। किन्तु यह संघ इस बात के बारे में निश्चित नहीं है कि क्या हमारे न्यायाधीश लिखित तर्क को सावधानीपूर्वक पढ़ने और ध्यान में रखने के लिए समय निकाल सकेंगे? फिर भी संघ का यह विचार है कि मौखिक तर्क के सीमित करने के लिए प्रयास किया जाना उचित है (बशर्ते कि लिखित तर्क प्रस्तुत किए जाने की इजाजत भी हो)[4] इसके विपरीत गुजरात की विधिज्ञ परिषद् (बार कौंसिल) का विचार है कि मौखिक तर्क को निर्बन्धित कर देने से अधिक मामलों का निपटारा तो होगा लेकिन इससे अन्याय भी होगा।[5] यह भी प्रतीत होता है कि मद्रास में भारतीय विधिज्ञ परिषद् (बार कौंसिल आफ इंडिया) द्वारा आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन में मौखिक तर्क का समय सीमित करने के विचार का बड़ा विरोध किया गया था। समय-सीमा निश्चित करने के सुझाव को भ्रांत धारणा माना गया और इससे न्याय की हत्या होने की संभावना प्रकट की गई।[6]

उत्तरों के उठाए गए मुद्दे।

2.5. हमारे लिए और उदाहरण देकर इन उदाहरणों की संख्या बढ़ाना आवश्यक नहीं है और निस्संदेह हमारा यह आशय भी नहीं है कि हम सभी उत्तरों की सूची बनाएं। किन्तु यहां उत्तरों में उठाए गए मुद्दों का उल्लेख कर देना हितकर होगा। एक न्यायाधीश ने मौखिक तर्क के लिए समय सीमित करने का समर्थन निम्नलिखित शब्दों में जोरदार ढंग से किया है।[7]

> "प्रश्न 21 में जो प्रस्ताव है वह अत्यंत समयानुकूल है और अब इसे सख्ती से लागू करने का समय आ गया है। किसी मामले के पक्षकारों में से किसी भी पक्षकार द्वारा विभिन्न प्रक्रमों पर तर्क प्रस्तुत करने में लगने वाला उचित समय निश्चित किया जाना चाहिए और केवल ऐसे आपवादिक मामले में, जो बहुत जटिल या लम्बे समय तक चलने वाला हो, न्यायाधीश कुछ अधिक समय दिए जाने के बारे में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर सकता है। इससे दो लाभ होंगे। इससे समय में कमी होगी और विधिज्ञ वर्ग (बार) के सदस्यों पर यह प्रभाव भी पड़ेगा कि उन्हें तर्क प्रस्तुत करने के लिए जो सीमित समय मिला है उसी के दौरान मुख्य बातों पर ही ध्यान देना वांछनीय होगा।"

---

1. उदाहरणार्थ विधि आयोग संकलन सं० 21/41, विधि आयोग की फाइल क्र० सं० 50।
2. उदाहरणार्थ विधि आयोग संकलन सं० 21/5।
3. आगे पैरा 1/7 देखिए।
4. विधि आयोग संकलन 21/13, विधि आयोग की फाइल सं० 107।
5. विधि आयोग संकलन सं० 21/24 (सबसे ऊपर) विधि आयोग की फाइल क्र० सं० 157।
6. विधि आयोग संकलन सं० 21/24 सबसे नीचे, विधि आयोग की फाइल क्रम सं० 109।
7. विधि आयोग संकलन सं० 21/4; विधि आयोग की फाइल क्रम सं० 1/14।

2.6. मौखिक तर्क के लिए समय सीमित करने के विरोध में जो उत्तर प्राप्त हुए हैं उनमें सबसे सारगर्भित और जोरदार विरोध उच्च न्यायालय के एक अन्य न्यायाधीश[1] ने किया है जिसे हम यहां पूर्ण रूप में उद्धृत कर रहे हैं :— मौखिक तर्क सीमित करने के विरोध में उत्तर।

"एक न्यायाधीश किसी मामले की सुनवाई तब तक करता है जब तक कि वह उस मुद्दे को, जिसे विद्वान काउन्सेल उठाना चाहता है, समझ नहीं लेता। जैसे ही वह मुद्दा समझ में आ जाता है न्यायाधीश विद्वान काउन्सेल को यह संकेत दे देते हैं कि वह दूसरे मुद्दे की चर्चा करे यह बात समझ में नहीं आ रही है कि यदि न्यायाधीश ने उठाए गए मुद्दे को नहीं समझा है और उस मुद्दे की सुनवाई बंद कर दी जाती है तो फिर उस मामले का निपटारा करने में कैसे आसानी होगी ? मैं कोई सीमा रखने के विरुद्ध हूं। मामला तो मामला ही होता है। उसकी सुनवाई करनी ही है और उसका केवल निपटारा नहीं करना है।"

2.7. श्री एच० एम० सीरवई का उत्तर बहुत ही विस्तारपूर्ण है। यहां स्थान की कमी के कारण उसे पूर्ण रूप में उद्धृत नहीं किया जा सकता किन्तु हमारा विश्वास है कि हमने उनके उत्तर में से जिन निम्नलिखित अंशों को शब्दश: उद्धृत[2] किया है उनमें उनके द्वारा उठाए गए महत्वपूर्ण मुद्दे जाहिर हो जाते हैं। हमने उनके उत्तर के सुसंगत अंशों को सुविधा के लिए पैरा में अक्षरक्रम से दिया है— श्री सीरवई का उत्तर।

(क) बहुत वर्षों से न्यायलयों में मौखिक तर्क प्रस्तुत किए जाते रहे हैं। न्यायाधीश अपने नोट स्वयं तैयार करते थे और लिखित तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जाती थी। निस्संदेह उन दिनों यह नियम था कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी अपने-अपने मामले का कथन फाइल करें और उससे न्यायालय को पक्षकारों के मामले की जानकारी हो जाती थी। इस प्रक्रिया से यह सुनिश्चित हो जाता था कि न्यायाधीश बहुत ध्यान दें क्योंकि उन्हें अपने नोट तैयार करने के लिए अपने समक्ष प्रस्तुत की गई बातों को और उन पर अपनी प्रतिक्रिया को अभिलिखित करना पड़ता था। पिछले कुछ वर्षों में एक ऐसी पद्धति विकसित हो गई जिसके अनुसार अधिकांश मामलों में पक्षकारों की ओर से मामले का कथन प्रस्तुत किया जाना समाप्त कर दिया गया और यह सुझाव दिया गया कि दोनों ओर के पक्षकार अपने-अपने तर्क के नोट लिखित रूप में दिया करें। मामले का कथन प्रस्तुत करने की पद्धति इसलिए समाप्त कर दी गई क्योंकि यह कहा जाता था कि काउन्सेल यह नहीं जानते कि ऐसा कथन कैसे तैयार किया जाता है और बहुत ही कम अपवादों को छोड़कर मामले के कथन निरर्थक होते थे। मेरे लिए यह विश्वास करना कठिन है कि जो काउन्सेल मामले का ऐसा कथन तैयार करने में असमर्थ है जिसमें मामले का कथन तथ्यों का संक्षिप्त कथन, न्यायालय या न्यायालयों द्वारा विनिश्चय किए जाने के आधार और विधि या तथ्य सबंधी ऐसी बात प्रस्तुत करनी होती है जिनसे यह दर्शित हो कि मामले का पिछला विनिश्चय क्यों गलत है, वह मामले का लिखित तर्क प्रस्तुत करने में कैसे समर्थ हो सकता है जिसमें मामले का कथन तैयार करने की अपेक्षा अधिक कौशल और परिश्रम की आवश्यकता होती है।

(ख) लिखित नोट के बारे में यह अनुमान किया जाता है कि उसमें पूरे मामले का कथन होगा। अपीलार्थी की ओर से तर्क का नोट तैयार करना एक माने में आसान है क्योंकि उसे मामले को शुरु करना है और यदि उसका इरादा हो तो वह अपने मामले को पूरे रूप में प्रस्तुत कर सकता है। किन्तु जब न्यायालय में मामले के लिए तर्क किया जाता है, भले ही वह सीमित समय के लिए हो, तो न्यायपीठ (बेन्च) द्वारा पूछे गए प्रश्नों या कुछ मामलों में दूसरी ओर के पक्षकार द्वारा उठायी गई आपत्तियों के कारण इस तर्क में परिवर्तन सुधार या वृद्धि करनी पड़ती है या उसे विशेषित करना पड़ता है। प्रत्यर्थी के लिए लिखित तर्क की तैयारी करने में काउन्सेल को असह्य परिश्रम करना पड़ता है क्योंकि न्यायालय में जब अपीलार्थी का काउन्सेल तर्क प्रस्तुत करके बैठ जाता है तब उसके तुरत बाद ही

1. विधि आयोग संकलन सं० 21/34।
विधि आयोग की फाइल क्र० सं० 140।

2. विधि आयोग संकलन सं० 21/29 से 21/33।
विधि आयोग की फाइल सं० क्र० 145 (श्री सीरवाई)।

प्रत्यर्थी के काउन्सल या काउन्सलों को साढ़े चार घंटे तक तर्क प्रस्तुत करना पड़ता है और तब तक उन्हें अपने तर्कों का कथन करने के लिए लिखित नोट तैयार करना पड़ता है और उसे प्रस्तुत करने के लिए तैयार रहना पड़ता है।

(ग) लिखित तर्क और मौखिक तर्क के बीच, चाहे वे कितने भी संक्षप में हों, बहुत बड़ा अंतर है। इस प्रक्रिया से विलम्ब होता है, और यह विलम्ब दोनों बातों में, अर्थात् मामले के संचालन में और निर्णय दिए जाने में, होता है। मामले के संचालन में इस कारण विलम्ब होता है कि नोट दिए जाने के बाद बहुत ही कम न्यायाधीशों को उसे पढ़ने के लिए समय मिलता है। इससे विलम्ब ही नहीं होता बल्कि अपीलार्थी के प्रति अन्याय भी होता है। दूसरी बात यह है कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जिम्मेदार काउन्सेल को समय के आधार पर सुसंगत तर्क प्रस्तुत करने से रोक देना घोर अन्याय है। यह कहा जाता है कि इस शक्ति का अभिप्राय पुनरावृत्ति को रोकना है। इससे बढ़कर और कोई आसान बात नहीं होगी कि काउन्सेल से यह कह दिया जाए कि उसका मुद्दा नोट कर लिया गया है और उसे इस मुद्दे को दुहराने की जरुरत नहीं है।

(घ) यह कहा जाता है कि अमरीका के उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) में मामले के प्रत्येक पक्ष को मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए आधे घंटे की समय-सीमा है। यदि यह पद्धति अमरीका में कारगर हो सकती है तो यह भारत में क्यों नहीं कारगर हो सकती? इसका उत्तर दो रूपों में है। अमरीका के उच्चतम न्यायालय में कार्यकरण का जो तरीका है वह हमारे उच्चतम न्यायालय के काम के तरीके से एकदम भिन्न है। न्यायाधीश तर्क सुनने के लिए एक सप्ताह में केवल चार दिन बैठते हैं और वह भी एक पखवारे (पन्द्रह दिन) तक। वे दूसरे पखवारे में न्यायालय में बैठते ही नहीं। उन्हें अनुसंधान-सहायकों की सेवाएं उपलब्ध हैं, न्यायिक सम्मेलन किए जाते हैं जिनमें सभी न्यायाधीश उपस्थित रहते हैं, जहां उत्प्रेषण (सरशियोरेराई) के आवेदनों पर और दिए जाने वाले निर्णयों पर विचार विमर्श किया जाता है। बड़े-बड़े विधि-निगमों (ला कारपोरेशन्स) द्वारा लिखित पक्षसार (ब्रीफ) फाइल किए जाते हैं। इन विधि निगमों का अनुसंधान की अत्यधिक सुविधाएं उपलब्ध हैं जिनके अंतर्गत अभिगणक यंत्रों (कम्प्यूटर मशीनों) द्वारा किया जाने वाला काम भी है।

(ङ) मेरी राय में शीघ्र निपटारा और उचित रूप में शीघ्र निर्णय सुनिश्चित करने के लिए तथा निर्णयों की गुणवत्ता (क्वालिटी) सुधारने के लिए पूर्वतर प्रचलित पद्धति को पुनःस्थापित करना चाहिए। लिखित तर्क की इजाजत नहीं देनी चाहिए, न्यायाधीशों को अपने नोट स्वयं बनाने चाहिए और दृढ़तापूर्वक किन्तु नम्रता से पुनरावृत्ति को रोकना चाहिए।

मध्यवर्ती मार्ग अपनाने वाले उत्तर।

2.8. मध्यवर्ती मार्ग अपनाने वाले उत्तरों अर्थात् ऐसे उत्तर के संबन्ध में, जो सिद्धांततः मौखिक तर्क के लिए समय सीमित करने के पक्ष में और इसके लिए कोई विशिष्ट दृढ़सीमा निश्चित करना नहीं चाहते, हम भारत के भूतपूर्व महान्यायवादी (एटर्नी जनरल) श्री लाल नारायण सिन्हा[1] और मध्य प्रदेश के राज्य विधि आयोग[2] द्वारा प्रकट किए गए विचारों को उद्धृत करना चाहेंगे। श्री लाल नारायण सिन्हा ने, प्रश्न 21 और प्रश्न 22 के संबंध में निम्नलिखित विचार प्रकट किया है :—

"इस दिशा में सुधार अत्यंत आवश्यक है। लिखित पक्षसार (ब्रीफ) और मौखिक तर्क के लिए अनुमानित समय की अमरीकी पद्धति अपनाने से परिहार्य पुनरावृत्ति और असंगत तर्क कम करने में बहुत सफलता मिल सकती है।"

मध्य प्रदेश राज्य विधि आयोग ने प्रश्न 21 के उत्तर में निम्नलिखित कथन किया है :—

"मामले की जटिलता के अनुसार समय की सीमा निश्चित किया जाना उचित होना चाहिए।"

---

1. विधि आयोग संकलन सं० 21/17, विधि आयोग की फाइल सं० 116 (श्री लाल नारायण सिन्हा)।
2. विधि आयोग संकलन सं० 21/17 (सबसे नीचे)। विधि आयोग की फाइल क्र. सं० 115।

एक उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त मुख्य न्यायमूर्ति ने भी मध्यममार्ग अपनाने के लिए अपना विचार प्रकट किया है[1] ।

"मेरा यह दृढ़ विचार है कि तर्क (बहस) के लिए समय-सीमा अधिरोपित करनी चाहिए । किन्तु ऐसी दशा में लिखित पक्षसार (ब्रीफ) होना चाहिए । योग्यताप्राप्त युवा वकीलों से यह मांग की जा सकती है कि वे सम्बद्ध न्यायाधीशों की सहायता करें । [अमरीका के सुप्रीम कोर्ट में विधि-लिपिकों (ला क्लर्क्स) की तरह] । उनसे गोपनीयता की शपथ लेने की मांग अवश्य की जानी चाहिए और उन्हें केवल अर्हता के आधार पर नियुक्त किया जाना चाहिए । मैं इस बात से सहमत नहीं हूं कि मौखिक तर्क सुने बिना किसी अपील का निपटारा कर दिया जाना चाहिए ।"

प्रोफेसर मैकहूवीनी के विचार ।

2.9. यहां यह उल्लेख कर देना हितकर होगा कि आयोग के सदस्य सचिव के अनुरोध पर विख्यात संवैधानिक विधिवेत्ता डा० एडवर्ड मैकहूवीनी ने[2] प्रश्नावली पर अपने विचार आयोग के पास भेजने की कृपा की थी । उन्होंने प्रश्न 21 (जिसमें इस प्रश्न पर विचार मांगे गए थे कि क्या मौखिक तर्क प्रस्तुत करने पर समय की कोई सीमा अधिरोपित की जानी चाहिए) के संबंध में निम्नलिखित विचार प्रकट किए हैं :—

"प्रश्न 21. अनिर्बन्धित मौखिक तर्क—जो प्रायः कई घंटे या कई दिन तक चलता रहता है—की अनुमति देना निस्संदेह ऐतिहासिक दृष्टि से "आंग्ल सैक्सन" और ब्रिटिश पैटर्न के अधिकरणों से व्युत्पन्न है तो आजकल के व्यस्त उच्चतम न्यायालय के लिए बहुत ही अनुपयुक्त और असंगत होता जा रहा है ।"

निस्संदेह हमें यह उल्लेख कर देना चाहिए कि डा० मैकहूवीनी ने प्रश्न 22 (लिखित पक्षसार) के उत्तर में यह कथन करते हुए कि लिखित पक्षसार काउंसेल द्वारा तर्क प्रस्तुत करने की और न्यायालय के अंतिम विनिश्चय की गुणवत्ता (क्वालिटी) में सुधार करेगा निम्नलिखित उपरिका (राइडर) भी जोड़ दिया—

"निस्संदेह, लिखित पक्षसार (ब्रीफ) की लम्बाई पर रोक लगाना पक्षसार को सारगर्भित बनाने में प्रोत्साहन देने और अनावश्यक विस्तार को कम करने के लिए उपयोगी भी हो सकता है ।"

प्रश्न के पक्ष और विपक्ष पर विचार।

2.10. हम मौखिक तर्क के लिए समय की सीमा निर्धारित करने के प्रश्न के संबंध में प्रकट किए गए विचारों पर सावधानीपूर्वक ध्यान देने से यह पाते हैं कि इस विषय पर मिश्रित प्रतिक्रिया हुई है । यह स्पष्ट है कि मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए समय की कमी कर देने से अधिक संख्या में निपटारा करना सुगम हो जाएगा बशर्ते कि पक्षकार न्यायालय के समक्ष अपने अपने पक्ष का निवेदन स्पष्ट और सारगर्भित रूप में करें और विस्तृत रीति से न करें। निस्संदेह इसमें एक बात यह है कि यह पूर्वानुमान किया जाता है कि लिखित तर्क बेढंगा और अपर्याप्त नहीं होगा और दूसरी बात यह है कि उसमें लम्बी-चौड़ी तथा बेसिरपैर की बातें नहीं होंगी । यह भी पूर्वानुमान किया जाता है और यह अधिक महत्व-पूर्ण विचारणीय बात है—कि न्यायाधीशों को लिखित तर्क पढ़ने के लिए पर्याप्त समय दिया जाएगा और (यदि वे चाहें तो) लिखित तर्क का सम्पादन और जांच करने के रूप में अनुसन्धान की सहायता उपलब्ध करायी जाएगी । यदि ये पूर्वापेक्षाएं बनाई और कायम रखी जाती हैं तो मौखिक तर्क में लगने वाले समय को सीमित करने का प्रश्न पर्याप्त रूप से युक्तिसंगत प्रतीत होता है ।

हम इसके साथ ही कई क्षेत्रों में इस प्रस्ताव का कड़ा विरोध भी पाते हैं जहां यह समझ में आने वाली भावना विद्यमान है कि समय की सीमा अधिरोपित कर देने से मौखिक तर्क में प्रत्यक्ष रूप से और तत्काल बिना किसी रूकावट के अपनी बात कहने का जो तत्व विद्यमान है वह समाप्त हो जाएगा । प्राप्त उत्तरों से ऐसा प्रतीत होता है कि इस विषय का ज्ञान रखने वाले बहुत से व्यक्तियों की यह राय है कि मौखिक तर्क के लिए समय कम कर देने से घोर अन्याय होगा ।

---

1. विधि आयोग संकलन सं० 21/25, विधि आयोग की फाईल क्र० सं० 126 ।

2. डा० एडवर्ड मेकहूवीनी, क्यू० सी० प्रोफेसर आफ इन्टरनेशनल ला एण्ड रिलेशन्स, साइमन फ्रेअर यूनिवर्सिटी, बर्नबे, बी० सी० कनाडा, का पत्र (18 जनवरी, 1984) ।

हम इस बात का महत्व समझते हैं कि यदि न्यायालय के समक्ष मामलों को पेश करने का कोई ऐसा तरीका सुझाया जाता है जो न्यायालय के कार्यकरण में भाग लेने वाले व्यक्तियों के बौद्धिक दृष्टिकोण के अनुकूल नहीं है और जिसके गुणदोष के आधार पर ठीक होने के बारे में बड़ा भ्रम है तो उस तरीके से कारगर रूप में काम करना बहुत कठिन हो जाएगा ।

मौखिक तर्क के लिए समय सीमा के बारे में सिफारिश ।

2.11. इस समस्या के इन सभी पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् यह सुझाव देना नहीं चाहते कि मौखिक तर्क के लिए कोई कठोर या गणित के अनुसार ठीक ठीक समय की सीमा निश्चित की जाए । सभी मामलों में मौखिक तर्क के लिए न्यूनतम समय की सीमा निश्चित करने का कोई पक्का नियम निर्धारित करना कठिन होगा । किन्तु फिर भी न्यायालय के लिए यह संभव होगा कि वह दोनों पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले काउन्सेलों से उस समय का अनुमान प्राप्त कर ले जो मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए आवश्यक हो और काउन्सेलों से उतना ही समय लेने का अनुरोध करे । ऐसा ही रास्ता अपनाने से और इसके साथ ही न्यायालय द्वारा यह मांग किए जाने से कि मामले का समुचित कथन फाइल करने से संबंधित नियमों के उपबंधों का अनुपालन किया जाए[1] । मामलों के निपटारे की दर बढ़ाने में काफी सफलता मिलेगी और इससे न्याय की हानि भी नहीं होगी । इस तरह से यह विषय न्यायाधीश की सद्भावना पर छोड़ दिया जा सकता है जो काउन्सेल से परामर्श करने के पश्चात् तर्क किए जाने वाले मामले और विवाद्यकों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए पहले ही समय निश्चित कर सकता है । न्यायाधीश को समय निश्चित करने में इस तथ्य को भी ध्यान में रखना है कि यदि लिखित तर्क भली भांति तैयार किए गए हैं तो अधिकांश मामलों में मौखिक तर्क प्रस्तुत करने में बहुत समय नहीं लगना चाहिए । यह सुझाव देना कि साधारणतया समय की सीमा आधा घंटा हो ठीक नहीं होगा किन्तु मुख्य विचारणीय बात यह है कि मौखिक तर्क को उचित समय के अंदर समाप्त कर देना चाहिए । हम विधि का कोई प्रारूपिक संशोधन करने की परिकल्पना नहीं कर रहे हैं किन्तु हम यह सिफारिश कर रहे हैं कि ऐसी कोई पद्धति निकालनी चाहिए और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों में उस पद्धति का निरंतर अनुसरण किया जाना चाहिए ।

विधि लिपिक (ला क्लर्क)

2.12. उपर्युक्त सिफारिश और भली भांति तैयार किए गए लिखित तर्क प्रस्तुत किए जाने के विचार के साथ जुड़ा हुआ विधि लिपिकों की नियुक्ति करने का प्रश्न भी है जिसके प्रति हम ऊपर निर्देश कर चुके हैं ।[2] अमरीका में संपूर्ण रूप में यह पद्धति सफल मानी गई है ।

प्रत्येक संस्था के आलोचक होते है और अमरीका में भी यह विशिष्ट संस्था आलोचना से बच नहीं पाई है । फिर भी इस विषय पर जो कुछ लिखी गई सामग्री विद्यमान है उसके अध्ययन से हमारी यह धारणा बनी है कि इस संस्था ने अपनी उपयोगिता सिद्ध कर दी है । हमारा यह विचार है कि भारत में इस पद्धति का पूरा और उचित परीक्षण नहीं किया गया है । इसका ऐसा परीक्षण किया जाना चाहिए । इसकी शुरुआत उच्चतम न्यायालय के उन न्यायाधीशों के लिए विधि-लिपिकों की व्यवस्था करके की जा सकती है जो ऐसे विधि-लिपिकों को रखना चाहें । विधि लिपिक विशिष्ट न्यायाधीशों के साथ लगाए जाने चाहिए और केवल न्यायालय के साथ नहीं लगाए जाने चाहिए । प्रत्येक न्यायाधीश के काम करने का अपना ढंग होता है, स्रोत-सामग्री ढूंढने का अपना तरीका होता है और पूर्वतर मामलों को पढ़ने की रीति के लिए अपनी पसन्द होती है । इन सभी तत्वों की, जो आत्मपरक होते हैं उपेक्षा न्यायाधीशों को अनुसंधान की सहायता उपलब्ध कराने में नहीं होनी चाहिए । हम विस्तार से यह बताने की आवश्यकता नहीं समझते हैं कि आदर्श विधि लिपिकों की अर्हताएं क्या होनी चाहिए, उनका उचित पारिश्रमिक क्या होना चाहिए और उन्हें कितने समय के लिए नियुक्त किया जाना चाहिए, आदि आदि । ये सब बातें और प्रशासनिक प्रकृति की अन्य सम्बद्ध बातों को उच्चतम न्यायालय द्वारा निश्चित किए जाने के लिए छोड़ देना अच्छा होगा । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि जटिल मामलों में विधि लिपिकों की संस्था उच्च न्यायालयों के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकती है ।

---

1. आगे पैरा 3.14 भी देखिए ।
2. पिछला पैरा 2.9; पछले पैरा 2.8 में दिए गए सुझाव से तुलना कीजिए ।

2.13. अमरीका में न्यायाधीश वीजन्सकी ने अपने विधि-लिपिक की सेवाओं का उपयोग किस प्रकार से किया इसका रोचक विवरण उपलब्ध है ।[1]

विधि-लिपिक न्यायाधीश वीजन्सकी द्वारा उपयोग ।

यह कहा जाता है कि जब उन्हें एक न्यास विरोधी विशेष रूप से जटिल वाद का निपटारा करना पड़ा तब उन्होंने अपने विधि-लिपिक कारे केसेन को भाड़े पर रख लिया । कारे केसेन उस समय हार्डवर्ड में एक प्रतिभाशाली युवा अर्थशास्त्री थे और बाद में प्रिन्सटन में उच्च अध्ययन संस्थान (इन्स्टीच्यूट फार एडवान्स्ड स्टडीज) के निदेशक हो गए । वीजन्सकी इस विशेष मामले में कारे केसेन की सेवाओं का उपयोग जिस प्रकार किया वह निस्संदेह उनकी मौलिक सूझबूझ दर्शित करता है । किन्तु यदि उनके डाकिट (निर्णय सूची) में अगला विवाद (उदाहरण के लिए) "नैतिक सद्चरित्र" के प्रश्न के सम्बन्ध में होता, जैसा कि **रेपायले** बनाम **युनाईटेड स्टेट्स** में था, तो केसेन की अर्थशास्त्रीय विशेषज्ञता से कोई सहायता नहीं मिल सकती थी ।

1. मर्फी एण्ड प्रिटशेट, कोर्टस, जजेज एण्ड पालिटिक्स (द्वितीय संस्करण), पृष्ठ 353 ।

अध्याय 3

मौखिक तर्क के आंशिक बदले में लिखित पक्षसार

लिखित पक्षसार

3.1. अब हम लिखित तर्क की चर्चा करेंगे । अमरीका में इसे "पक्षसार (ब्रीफ)" के नाम से जानते हैं और यह एक सुविधाजनक शब्द है जिसका हम बार-बार प्रयोग करेंगे और यह आशा करते हैं कि साधारण पाठक पक्षसार (ब्रीफ) शब्द के निम्नलिखित अर्थों से भ्रम में नहीं पड़ेगा :—

(i) पक्षसार का प्रयोग उन अनुदेशों (हिदायतों) के अर्थ में किया जाता है जो एक मुवक्किल अपने काउन्सेल को (साधारणतया सालिसिटर की मार्फत) देता है, और

(ii) पक्षसार का प्रयोग उस लिखित कथन के अर्थ में किया जाता है जिसमें काउन्सेल उन विधिक प्रतिपादनाओं को प्रस्तुत करता है जिनका वह अवलम्ब लेना चाहता है और उसे न्यायालय को देता है ।

(साधारणतया यह लिखित कथन विस्तृत प्ररूप में तैयार किया जाता है) उपर्युक्त पहला पक्षसार **काउन्सेल को (मुवक्किल द्वारा)** दिया जाता है जब कि दूसरा पक्षसार **काउन्सेल द्वारा** (न्यायालय को) दिया जाता है । पहले पक्षसार में तथ्यों पर जोर दिया जाता है । दूसरे पक्षसार में विधि के मुद्दों पर मुख्य रूप से जोर दिया जाता है, सिवाय उस पक्षसार के जिसे "ब्रैन्डीस ब्रीफ"[1] कहा जाने लगा है जिसमें संवैधानिक न्यायनिर्णयन के लिए सुसंगत कुछ सामाजिक और आर्थिक आंकड़े दिए जाने की आशा की जाती है ।

3.2. हमारी प्रश्नावली के प्रश्न 22 में इस विवाद्यक के बारे में विचार मांगे गए थे कि क्या काउन्सेल को लिखित पक्षसार प्रस्तुत करने के लिए बाध्य कर देने से मौखिक तर्क कम हो जाएंगे ? यद्यपि स्पष्ट शब्दों में यह नहीं कहा गया है कि **इस प्रश्न** में जो बात अनुध्यात थी वह ऐसी पद्धति के बारे में है जिसके अधीन लिखित तर्क से मौखिक तर्क की अनुपूर्ति होगी या मौखिक तर्क से लिखित तर्क की अनुपूर्ति होगी । दूसरे शब्दों में, इसे इस प्रकार कह सकते हैं कि इस प्रश्न में मौखिक तर्क के आंशिक बदले में लिखित तर्क प्रस्तुत किए जाने की बात अनुध्यात थी । इस विशेष प्रश्न में यह अनुध्यात नहीं था कि क्या मौखिक तर्क के पूर्ण बदले में लिखित तर्क प्रस्तुत करने की पद्धति अपनायी जाए ? यद्यपि प्रश्न 23 में ऐसी संभावना अनुध्यात है[2] । अतः इस समय हमें केवल इस प्रश्न से सरोकार है कि कहां तक एक ऐसी पद्धति अपनायी जाए जिसमें काउन्सेल द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली मुख्य बातें न्यायालय को लिखित तर्क के रूप में पहले प्रस्तुत की जाएं और फिर बाद में (सुनवाई के समय) मौखिक तर्क प्रस्तुत किया जाए जो न्यूनतम समय के लिए सीमित हो ।

प्रश्न 22 के संबंध में प्रकट किए गए विचार ।

3.3. इस अर्थ में प्रश्न 22 का सम्बन्ध प्रश्न 21 से है और उसके साथ जुड़ा हुआ है । हमने प्रश्न 21 की चर्चा करते समय[3] उसके सम्बन्ध में प्राप्त उत्तरों में उठाए गए महत्वपूर्ण मुद्दों का संक्षेप पहले ही दे दिया है—यह एक ऐसा तथ्य है जो वह पृष्ठभूमि बनाता है जिसके आधार पर हम प्रश्न 22 के संबंध में प्रकट किए गए विचारों की चर्चा आगे करेंगे ।

प्रारंभ में ही यह उल्लेख कर दिया जाए संयुक्त वकील संघ (यूनाइटेड लायर्स एसोसिएशन) नई दिल्ली ने अपने उत्तर[4] में यह कहा है कि उच्चतम न्यायालय नियम (सुप्रीम कोर्ट रूल्स) में पहले से ही कुछ ऐसे उपबंध हैं जिनके अनुसार रिट अर्जियों (पिटीशनों) में लिखित पक्षसार फाइल किए जा सकते हैं और सिविल अपीलों में मामले के कथन फाइल किए जा सकते हैं किन्तु संयुक्त वकील संघ का कहना है

---

1. आगे पैरा 3.15 देखिए ।
2. आगे अध्याय 4 ।
3. पिछला अध्याय 2 ।
4. विधि आयोग संकलन सं० 22/18, विधि आयोग की फाइल सं० 137 ।

कि "न तो विधिज्ञवर्ग (बार) और न न्यायपीठ (बेंच) इन उपबंधों का पालन किए जाने पर गंभीरता से ध्यान देता है", और मामले के कथन "लगभग सभी मामलों" में प्रस्तुत किया जाना अनावश्यक समझ कर छोड़ दिया जाता है ।

केवल इस प्रश्न पर कि क्या लिखित पक्षसार फाइल करने से मौखिक तर्क में लगने वाले समय में कमी होगी, अपेक्षाकृत अप्रत्याशित रूप से गहरा मतभेद है । प्रश्नावली के जो उत्तर प्राप्त हुए, उनमें से कुछ में तो इस बात से सहमति प्रकट की गई है कि ऐसा करने से समय में कमी होगी किन्तु अधिकांश उत्तरों में या तो दृढ़तापूर्वक यह कह गया है कि लिखित पक्षसार फाइल किए जाने से मौखिक तर्क में लगने वाले समय में कोई कमी नहीं होगी या यही बात विवक्षित रूप से सुझाव देने के रूप में कही गई है। उनकी यह राय इस कारण है कि कुछ पूर्वपेक्षाओं की पूर्ति नहीं होती है (उनके मतानुसार) ।

न्यायाधीशों के कार्यभार में वृद्धि ।

3.4. हमें उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश से प्रश्न 22 का नकारात्मक उत्तर प्राप्त हुआ है[1]। जो निम्नलिखित शब्दों में है : —

"नहीं । ऐसा कदम उठाने से न्यायाधीश को मामला समझने में कमी भी होगी । संभवतः लिखित पक्षसार पढ़ने में न्यायाधीश का अधिक समय लगेगा भले ही न्यायालय में न लगे ।"

लम्बे अन्तराल का प्रभाव ।

3.5. उच्च न्यायालय के एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश ने अपने उत्तर में[2] यह कहा है कि कई बार ऐसा भी होता है कि विधि (लिखित पक्षसार में निर्दिष्ट विधि) बीच में पड़ने वाले समय में सुनाए गए निणयों से परिवर्तित हो जाती है । उक्त न्यायाधीश ने "मामले के कथन" से संबंधित नियमों का उल्लेख किया है और यह कहा है कि "जब तक कि मामला फाइल करने के समय और उसकी सुनवाई होने के बीच का समय एक वर्ष से कम न हो तब तक इससे सुनवाई का समय कम लगने में कोई पर्याप्त सहायता नहीं मिलेगी ।"

अन्य कठिनाइयां ।

3.6. एक उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति ने[3] यह कहा है कि लिखित पक्षसार फाइल करने से मौखिक तर्क में कमी होनी चाहिए किन्तु उन्होंने अपनी इस उपधारणा के साथ निम्नलिखित महत्वपूर्ण विशेष बातें भी जोड़ दी हैं : —

(i) यह इस बात पर निर्भर करेगा कि पक्षसार तैयार करने में कितना परिश्रम किया गया है;

(ii) यह न्यायाधीशों के परिश्रम को निश्चित रूप से बढ़ा देगा अर्थात् उन्हें अधिक परिश्रम करना पड़ेगा ;

(iii) यदि लिखित पक्षसार प्रस्तुत करने की बजाए कोई और तरीका अपनाए जाने की अनुमति दी जाती है तो प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा ;

(iv) लिखित पक्षसार प्रस्तुत करने की पद्धति प्रारंभ करने से मुकदमेबाजी में कुछ अधिक खर्चा होगा क्योंकि काउन्सेल लिखित पक्षसार के लिए अधिक फीस या अतिरिक्त फीस की मांग करे।

उन्होंने इस प्रश्न का अपना उत्तर यह कह कर समाप्त किया है कि यह प्रस्ताव "कुछ रक्षोपायों के साथ" परीक्षण योग्य है ।[4]

क्या लिखित तर्क के बाद मौखिक तर्क प्रस्तुत किया जाना चाहिए ।

3.7. मद्रास से एक अधिवक्ता (एडवोकेट) ने यह सुझाव दिया है कि यदि लिखित तर्क प्रस्तुत किया ही जाना है तो उसे निश्चय ही मौखिक तर्क के बाद प्रस्तुत किया जाना चाहिए, अन्यथा (उनका यह कहना है कि) मौखिक तर्क विस्तृत हो जाएग क्योंकि सभी मुद्दों को, जिनमें छोटे मुद्दे भी होंगे और ऐसे मुद्दे भी होंगे जो अंत में असंगत समझे जाएं, शामिल करना पड़ सकता है । प्रायः न्यायाधीश अपनी पूर्व-मनोवृत्ति के अनुसार मामलों पर विचार करते हैं और वह अपने अत्यधिक कार्यभार को देखते हुए लिखित रूप में प्रस्तुत बातों को छोड़ सकते हैं ।

---

1. विधि आयोग संकलन सं० 22/3 ।
2. विधि आयोग संकलन सं० 22/4 ।
3. विधि आयोग संकलन सं० 22/5 (सबसे नीचे) ।
4. विधि आयोग संकलन सं० 22/7 ।

महाधिवक्ता (एडवोकेट जनरल) के विचार ।

3.8. एक राज्य के महाधिवक्ता ने निम्नलिखित शब्दों में अपना विचार जोरदार ढंग से प्रकट किया है[1] :—

"मैं इस सुझाव के विरुद्ध हूं कि मौखिक तर्क में कमी करने की दृष्टि से काउन्सेल को लिखित पक्षसार फाइल करने के लिए बाध्य किया जाए क्योंकि जब मौखिक तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति देनी पड़ जाती है तब अनुभव के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत के उच्चतम न्यायालय में लिखित पक्षसार फाइल करने से मौखिक तर्क में किसी प्रकार की कमी नहीं हुई है। मैं लिखित पक्षसार फाइल करने की पद्धति छोड़ देने का सुझाव दूंगा जिससे कि मामलों के विनिश्चय केवल मौखिक तर्क के आधार पर किए जा सकें जिसका यदि समुचित रूप से नियंत्रण किया जाता है तो वह उचित सीमा के अंदर रहेगा और उससे मामलों के निपटारे पर अनुचित प्रभाव नहीं पड़ेगा।

न्यायाधीश का कार्य।

3.9. उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश[2] ने यह कहा है कि लिखित पक्षसार प्रस्तुत किए जाने से मौखिक तर्क में कमी हो सकती है परन्तु तब जब कि न्यायाधीश उसे मौखिक तर्क प्रारंभ होने से पहले पढ़ ले।

मामला ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर मौखिक तर्क।

3.10. उच्च न्यायालय के एक अन्य न्यायाधीश[3] ने यह सुझाव दिया है कि सबसे अच्छा तरीका यह है कि मामला ग्रहण किए जाने के प्रक्रम (स्टेज) पर मौखिक सुनवाई न की जाए। (उनका कहना है कि) मामला ग्रहण करने की बातों का निपटारा एक या दो (या दो से अधिक) न्यायाधीशों द्वारा चैम्बर्स (कक्षों) में ही किया जा सकता है। इससे जल्दी निपटारा किया जाएगा और अपील के ग्रहण किए जाने का नियंत्रण भी किया जाएगा। "कोई अपील, जो प्रत्यक्षतः ग्रहण किए जाने योग्य प्रतीत नहीं होती है, निस्संदेह प्रारंभ में ही नामंजूर कर दी जाएगी।"

"मौखिक सुनवाई के अभाव में ऐसा करना अधिक आसान और शीघ्रतर होगा क्योंकि अपीलार्थी को जो कुछ कहना था वह तो उसने नीचे के न्यायालयों में कह दिया होगा और अब वह इस योग्य नहीं है कि उसकी फिर से सुनवाई की जाएं, जब तक कि अभिकथित गलती मौखिक सुनवाई के बिना स्पष्ट न होती हो।" उन्होंने अमरीका की पद्धति के प्रति निर्देश किया है जिसके अनुसार ग्रहण के प्रक्रम पर कोई मौखिक सुनवाई नहीं की जाती है।

वकील कहां तक प्रशिक्षित हैं।

3.11. एक उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति ने यह दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है कि भारत में वकील और विधिज्ञ वर्ग (बार) अधिकांश रूप से लिखित पक्षसार फाइल करने में प्रशिक्षित नहीं हैं, भले ही उनमें से कुछ प्रशिक्षित हैं। किन्तु (उन्होंने आगे कहा है कि) यदि न्यायाधीश मामला प्रारंभ होने से पहले पक्षसारों को पढ़ने का कष्ट उठाएं तो मौखिक तर्कों को कम करने और मामलों का निपटारा करने में बड़ी मदद मिल सकती है।"[4]

प्रश्न 21 पर विचार विनिमय करते समय श्री एच० एम० सीरवाई के विचारों के प्रति पहले ही निर्देश किया गया है।[5]

प्रोफेसर मैकहवीनी के विचार (पक्षसार के लम्बे होने को सीमित करना भी वांछनीय है)।

3.12. हमने विख्यात संवैधानिक वकील प्रोफेसर मैकहवीनी के विचारों के प्रति भी निर्देश किया है[6]। फिर भी हम उनकी आलोचना को दुहराना चाहेंगे क्योंकि उसमें लिखित तर्क के लाभों और उसकी सीमा को भी सारगर्भित रूप से बताया गया है। उन्होंने प्रश्न 22 का उत्तर देते हुए यह कहा है : —

"मैं तुलनात्मक संवैधानिक विधि के समस्त प्रयोगसिद्ध अनुभव से इस प्रश्न का उत्तर "हां" में देता हूं और आप निश्चय ही काउन्सेल द्वारा तर्क की क्वालिटी में तथा न्यायालय द्वारा विनिश्चय

---

1. विधि आयोग संकलन सं० 22/15।
   विधि आयोग की फाइल क्र० सं० 122।
2. विधि आयोग संकलन सं० 28/29।
3. विधि आयोग संकलन सं० 22/30।
4. विधि आयोग संकलन सं० 21/20।
   विधि आयोग की फाइल क्र० सं० 138।
5. पिछला पैरा 2.7।
6. पिछला पैरा 2.9।

करने की क्वालिटी में सुधार कीजिए। **इसमें कोई सन्देह नहीं की लिखित पक्षसार (ब्रीफ) की लंबाई पर रोक लगाना पक्षसार को संक्षेप में सारगर्भित बनाने के लिए प्रोत्साहित करने और उसे अनावश्यक बातों से भरने में कमी करने के लिए उपयोगी होगा।"**

लिखित पक्षसार के बारे में निष्कर्ष

3.13. हमने इस विषय के सभी पहलुओं पर विचार करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला है कि चूंकि यह दृढ भावना विद्यमान है कि ऐसे लिखित पक्षसार की, जिसमें विस्तार से तर्क किए गए हों, अपेक्षा करने से उसका प्रयोजन ही निष्फल हो जाएगा क्योंकि ऐसा करने में अनेक कठिनाइयां और कमियां हैं इसलिए अभी वह प्रक्रम (स्टेज) नहीं आया है कि एसे पक्षसार प्रस्तुत करने पर जोर दिया जाए। हमें यह बात ध्यान में अवश्य रखनी चाहिए कि इस विचार का कड़ा विरोध रहा है जैसा कि श्री एच० एम० सीरवई[1] द्वारा व्यक्त किए गए विचारों से यह प्रकट होगा कि लिखित तर्क की पद्धति प्रारंभ करने के लिए आज्ञापक अपेक्षा करने से कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न हो सकती हैं। पहली बात तो यह है कि भले ही अपीलार्थी के तर्कों का नोट तैयार करना आसान हो लेकिन मौखिक सुनवाई के दौरान तर्क परिवर्तित, विशेषित या विस्तृत हो जाते हैं, चाहे वे कुछ मामलों में न्यायपीठ (बेंच) द्वारा पूछे गए प्रश्नों के परिणामस्वरूप या दूसरे पक्ष की ओर से की गई आपत्तियों के परिणामस्वरूप ऐसे हो जाएं। दूसरी बात यह है कि श्री सीरवई के मतानुसार न्यायाधीशों को ऐसे नोट जैसे ही वे दिए जाते हैं, पढ़ने के लिए साधारणतया समय नहीं रहता जिससे कि लिखित तर्क को पहले प्रस्तुत किए जाने का उद्देश्य निष्फल हो जाता है। तीसरी बात जैसा कि श्री सीरवई ने जोर देकर कहा है, यह है कि लिखित तर्क का पूर्ण या पर्याप्त रूप से अवलम्ब लिए जाने में (जैसा कि अमरीका में है) यह परिकल्पना की जाती है कि न्यायाधीशों से सुनवाई करने के लिए एक पखवारे तक एक सप्ताह में केवल चार दिन न्यायालय में बैठना चाहिए (जैसा कि अमरीका में है जहां आगामी दूसरे पखवारे में न्यायाधीश न्यायालय में बैठते ही नहीं)। चौथी बात, जैसा कि श्री सीरवई ने बताया है, यह है कि अमरीका में लिखित पक्षसार बड़े-बड़े विधि-निगमों द्वारा फाइल किए जाते हैं जिनके पास अनुसंधान की अपार सुविधाएं हैं जिनके अंतर्गत कम्प्यूटरों द्वारा तैयार की गई सामग्री की सुविधाएं भी उन्हें उपलब्ध हैं। भारत में ऐसी सुविधाएं उपलब्ध नहीं हो सकतीं।

मामले का विवरण, उसके बारे में सिफारिश।

3.14. इन सब कठिनाईयों को ध्यान में रखकर हम कम से कम वर्तमान समय के लिए यह सिफारिश करना नहीं चाहते कि सभी मामलों में लिखित तर्क फाइल करने की अनिवार्य अपेक्षा को लागू करना शुरू किया जाए। किन्तु इसके साथ ही हम यह सोचते हैं कि यदि "मामले का कथन फाइल करने की युक्ति को समुचित रूप से क्रियान्वित किया जाए तो इससे मौखिक तर्क में लगने वाले समय की कमी करने या मौखिक तर्क को समुचित दिशा प्रदान करने में और प्रत्यक्ष रूप से सुसंगत मुख्य विवाद्यकों की ओर ध्यान आकृष्ट करने में सफलता मिलेगी जिससे अपने आप ही समय की बचत होगी। अतः हमारी पहली सिफारिश यह है कि मामले/अपील का ऐसे कथन[2] पर जोर देना चाहिए जो काउन्सेल द्वारा समुचित रूप से तैयार और न्यायालय में फाइल किया गया हो। यदि काउन्सेल आवश्यक समझता है तो उसे लिखित पक्षसार फाइल करने की अनुमति दी जा सकती है और यह स्वाभाविक है कि वह मामले/अपील के कथन से अधिक विस्तृत होगा।

इस बात पर जोर देना समुचित है कि जो लिखित पक्षसार फाइल किए जाते हैं वे अवश्य ही उचित रूप में लम्बे हों अन्यथा न्यायाधीशों को बहुत लम्बे पक्षसार पढ़ने में बहुत समय लग जाएगा। इस सिफारिश का आशय इसे उच्चतम न्यायालय में लागू करना है। इसे उच्च न्यायालयों में भी निम्नलिखित अपीलों/मामलों के बारे में लागू किया जा सकता है :—

(1) प्रथम अपीलें,

(2) मृत्युदंड के मामले, और

(3) अन्य जटिल मामले।

---

1. विधि आयोग संकलन सं० 21/28 से 21/32 तक।
   पिछला पैरा 2.7 देखिए।
2. पिछला पैरा 2.11 भी देखिए।

संवैधानिक मामलों के बारे में सिफारिश (तथ्य संबंधी पक्षसार)।

3.15. हमारी दूसरी सिफारिश संवैधानिक प्रश्न वाले मामलों के लिए विशेष रूप से सुसंगत है। ऐसे मामलों के बारे में ऐसे पक्षसार फाइल करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए जिनमें लिखित रूप में ऐसी तथ्य संबंधी सामग्री हो जो मामले की पृष्ठभूमि के रूप में हो। ऐसे पक्षसार, जो अमरीका के "ब्रेन्डीस ब्रीफ्स" कहे जाते हैं, संवैधानिक न्यायनिर्णयण में बहुत उपयोगी होते हैं और हम यह सिफारिश करते हैं कि संवैधानिक प्रश्न वाले जिन मामलों में विवाद का अवधारण करने के लिए तथ्य संबंधी सामग्री महत्वपूर्ण है उन मामलों में ऐसे पक्षसारों को फाइल करने के लिए प्रोत्साहन देना चाहिए। ऐसे पक्षसारों में संवैधानिक न्यायनिर्णयन के लिए सुसंगत तथ्यों को रखना चाहिए (जो पक्षकारों की ओर से फाइल किए गए शपथपत्रों के अतिरिक्त होंगे) और उनमें, जहां कहीं समुचित हो, समितियों और आयोगों की प्रकाशित रिपोर्टों से उद्धरणों को सम्मिलित करना चाहिए।

यह पद्धति उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में अपनाई जा सकती है।

ब्रैंडीस ब्रीफ।

3.16. सबसे प्रसिद्ध ब्रीफ, जिसमें उपर्युक्त दृष्टिकोण का उपयोग किया गया था, वह ब्रीफ था जिसे लुइ डी० ब्रैंडीस ने **मूलर बनाम ओरगान (1908)** के मामले में तैयार किया था और अमरीका के सुप्रीम कोर्ट के समक्ष प्रस्तुत किया था। इस मामले में ब्रैन्डीस राज्य की एक विधि की संवैधानिकता की प्रतिरक्षा कर रहे थे जिस विधि में महिलाओं के लिए कार्यादिवस का अधिकतम समय दस घंटा प्रतिदिन निश्चित किया गया था। न्यायालय की राय में यह पक्षसार (ब्रीफ) बहुत ही उपयोगी था और न्यायालय ने इस बात को विशेष रूप से स्वीकार किया था। इस पक्षसार में विदेशी और अमरीकी ऐसी विधियों के बारे में अत्यधिक जानकारी एकत्र की गई थी जिनमें महिलाओं के कार्य करने का समय सीमित किया गया था और ऐसी सरकारी रिपोर्टों की भी जानकारी दी गई थी जिनमें महिलाओं को अधिक समय तक श्रम करने से होने वाले खतरों से बचाने पर जोर दिया गया था।[1]

जैसा कि आगे बताया गया है वैयक्तिक कार्य से संबंधित विवाद वाले मुकदमों और समस्त वर्गों या समूहों (ग्रुपों) से संबंधित मामलों में अंतर होता है। वर्गों या ग्रुपों के मामलों में विवाद का विषय ऐसे सामाजिक या आर्थिक विधान के लागू किए जाने या उसकी वैधता का प्रश्न होता है जिस विधान का उद्देश्य आचरण पर सरकारी नियंत्रण स्थापित करना होता है या वे ऐसे मामले होते हैं जिनमें लोकनीती को न्यायालय में इस आधार पर चुनौती दी जाती है कि उससे संवैधानिक मानदंडों का उल्लंघन होता है। जब न्यायालयों को इतने विस्तार में तथ्यों का पता लगाना अनिवार्य हो तो प्रत्यक्षदर्शी (चश्मदीद) साक्षियों या सहभागियों के मौखिक कथन के परिसाक्ष्य (टेस्टमनी) पर विश्वास करना अपर्याप्त और अनुचित दोनों बातें हो जाती हैं यदि न्यायाधीशों को ऐसे विवाद्यकों का विनिश्चय बुद्धिमानी से करना है तो उन्हें विभिन्न प्रकार की साक्ष्य संबंधी प्रक्रियाएं—विभिन्न प्रकार के साक्ष्य—अवश्य उपलब्ध होने चाहिए[2]।

आयरलैंड की पद्धति।

3.17. अभी हाल के वर्षों में आयरलैंड के सुप्रीम कोर्ट ने समाज विज्ञान सम्बन्धी साक्ष्य स्वीकार करने में तत्परता दर्शित की है। उदाहरण के लिए, 1965 में न्यायालय ने एक राष्ट्रीय कानून की, जिसमें स्थानीय निकायों से जनता के पीने का पानी साफ करके देने की अपेक्षा की गई थी, संवैधानिकता कायम रखने के मामले में अनेक वैज्ञानिक रिपोर्टों की जांच और चिकित्सीय विशेषज्ञों के परिसाक्ष्य (टेस्टमनी) का पुनर्विलोकन किया था। मुख्य न्यायमूर्ति ने स्पष्ट रूप से यह स्वीकार किया था कि न्यायाधीशों को जब वैज्ञानिक ज्ञान के बढ़ते हुए या बदलते हुए विषयों को समझना पड़ता है तो उन्हें बहुत कठिनाइयां होती है।[3] उन्होंने जो कुछ कहा था वह इस प्रकार है, "ये ऐसे विषय नहीं हैं जिनके बारे में यह उपधारणा की जाए कि न्यायालय को इनका ज्ञान प्राप्त है और तदनुसार अधिनियम की असंवैधानिकता, यदि वह असंवैधानिक हो तो, मामले में प्रस्तुत विशेष साक्ष्य के प्रति निर्देश करके अवधारित नहीं की जा सकती। चूंकि हर मामले में साक्ष्य में अन्तर हो सकता है और वैज्ञानिक ज्ञान में वृद्धि हो सकती है तथा वैज्ञानिकों के विचार बदल सकते हैं इसलिए न्यायालय का अवधारण इस विनिश्चय से अधिक नहीं हो सकता कि जो साक्ष्य प्रस्तुत किए गए हैं उनके आधार पर क्या यह कहा जा सकता है कि वादी ने अधिनियम को असंवैधानिक साबित करने के भार का निर्वहन किया है या नहीं।"

---

1. मर्फी एण्ड प्रिटशिट, कोर्ट्स, जजेज एण्ड पालिटिक्स (द्वितीय संस्करण) पृष्ठ 350।
2. यथोक्त, पृष्ठ 348।
3. मर्फी एण्ड प्रिटशिट, कोर्ट्स, जजेज एण्ड पालिटिक्स (द्वितीय संस्करण) पृष्ठ 352।

3.18. हमारी तीसरी सिफारिश यह है कि संवैधानिक मामलों में, जहां कहीं साध्य हो, तथ्यों का ऐसा कथन फाइल किया जाना चाहिए जिसके बारे में सहमति हो चुकी हो जिससे कि सुनवाई में लगने वाला समय कम किया जाए। यह स्पष्ट रूप से वांछनीय है कि न्यायालयों को यथासम्भव साधारण विवाद्यकों पर विचार करना चाहिए और उनका समय तथ्य सम्बन्धी विवादों में बर्बाद नहीं होना चाहिए। यह पद्धति उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में भी अपनाई जा सकती है।

संवैधानिक मामले—सहमति से तथ्यों का कथन।

3.19. हमारी चौथी सिफारिश यह है कि उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों का आपस में सम्मेलन करने के लिए जहां तक सम्भव हो, अलग से एक दिन निश्चित कर दिया जाए, जैसा कि अमरीका में है। इससे सुसम्बद्ध सिद्धान्तों को बनाने में, मतभेदों को हल करने में और निर्णयों में बहुत हद तक अतिव्याप्ति को दूर करने में सहायता मिलेगी। ऐसी पद्धति से न्यायाधीशों के बीच परस्पर अधिकतम परामर्श और समन्वय करने में सुगमता होगी और उन्हें सामान्य बहुमत से निर्णय देने का प्रयास करने में सहायता मिलेगी। निस्सन्देह ऐसे सम्मेलनों से कुछ मामलों में तो न्यायाधीशों के बीच बौद्धिक समन्वय स्थापित होगा और ऐसे अवसरों में कमी होगी जब पृथक् और समानान्तर निर्णय सुनाए जाएं जो सुसम्बद्ध सिद्धान्त बनाए जाने के लिए अनुकूल स्थिति नहीं होती हैं। यह सिफारिश उच्चतम न्यायालय में लागू किए जाने के लिए आशयित हैं। यह उच्च न्यायालयों में भी पूर्ण न्यायपीठ (फुल बेंच) द्वारा सुनवाई किए जाने वाले मामलों के बारे में लागू की जा सकती हैं।

सम्मेलनों के लिए सिफारिश।

3.20. हम यह आशा करते हैं कि इस अध्याय में जो सिफारिशें की गई हैं उनसे न्यायिक समय की बचत करने में सहायता मिलेगी। इस सिलसिले में, हम हाउस आफ लार्ड्स के एक अध्ययन में, जो कुछ समय पहले प्रकाशित किया गया था, दिए गए सुझाव पर ध्यान देना चाहते हैं। हम एक पुस्तक के सुसंगत लेखांश को यहां जानकारी के लिए उद्धृत कर रहे हैं। इसमें इंगलैंड की वर्तमान स्थिति का वर्णन है और सुधार के लिए एक सुझाव भी दिया गया है :—

इंगलैंड और अमरीका के आदर्शों (माडलों) के बीच समझौता।

> "हाउस आफ लार्ड्स में की गई अपील में अपीलार्थी और प्रत्यर्थी वर्तमान पद्धति के अधीन एक दस्तावेज पेश करने के लिए बाध्य हैं जिसे मामला (केस) कहा जाता है। इसमें उन तर्कों की, जिनका अवलम्ब दोनों पक्षकार लेते हैं, संक्षिप्त रूपरेखा रहती है और चुनी गई दस्तावेजें रहती हैं जिनमें याचिका (रिट) और निचले न्यायालयों द्वारा दिए गए निर्णयों की अनुलिपियां (या रिपोर्टें) होती हैं। किन्तु अमरीका के सुप्रीम कोर्ट की प्रक्रिया के विपरीत हाउस आफ लार्ड्स की प्रक्रिया मौखिक तर्क (बहस) की सुनवाई करने की है और यह प्रक्रिया पूरी तरह से लागू की जाती है। अमरीका के सुप्रीम कोर्ट में विस्तृत पक्षसार (ब्रीफ) मुद्रित होते हैं। ये पक्षसार न्यायालय के समक्ष कार्यवाहियों के आधार होते हैं तथा मौखिक तर्क पर समय की सीमा का निर्बन्धन रहता है। मौखिक तर्क को पक्षसार (ब्रीफ) का केवल अनुपूरक माना जाता है। हाउस आफ लार्ड्स में मामले (केस) को केवल अन्तर्ग्रस्त विवाद्यकों का उपयोगी और प्रारम्भिक कथन माना जाता है। कभी-कभी ऐसा प्रतीत होता है कि माननीय न्यायाधीशों ने (लार्डशिप्स ने) उनको पढ़ा ही नहीं है।"

3.21. उपर्युक्त अध्ययन में दक्षिण अफ्रीका की स्थिति की चर्चा है। "जैसी वर्तमान स्थिति है उसमें मामले (केस) का उपयोग नहीं किया जाता। हमारा प्रस्ताव है कि दक्षिण अफ्रीका के न्यायालयों की प्रक्रिया अपनाई जाए जिसके द्वारा काउन्सेल इस बात के लिए बाध्य है कि वह सुनवाई के चार दिनों[1] के अन्दर "तर्क के शीर्षकों" को प्रस्तुत कर दे जिनमें उन प्रस्थापनाओं और नजीरों के पूर्ण सारांश दिए गए हों जिनका वह अवलम्ब लेना चाहता है। फिर भी मौखिक तर्क में समय की कोई सीमा नहीं होगी किन्तु काउन्सेल से यह आशा की जाती है कि वह "तर्क के शीर्षकों" में बताई गई सामग्री की केवल अनुपूर्ति करने तक ही अपने को सीमित रखेगा और उसे न्यायालय की इजाजत के बिना अतिरिक्त तर्कों को प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जाएगी (यह इजाजत बहुत ही कम बार दी जाएगी)। ऐसी पद्धति से अपील की सुनवाई के समय पहली बार नए मुद्दे उठाने की आवश्यकता समाप्त हो जाएगी"।[2] यह उल्लेख कर दिया जाए कि दक्षिण अफ्रीका[3] में सुप्रीम कोर्ट के अपील-खंड के समक्ष अपीलों में तक

दक्षिण अफ्रीका में स्थिति।

1. इसका अर्थ सुनवाई से चार दिन पहले है।
2. लुई ब्लूम-कूपर एण्ड गैविन-ड्रेवरी, फाइनल अपील (1972), पृष्ठ 403, 404।
3. लुई ब्लूम-कूपर एण्ड गैविन ड्रेवरी, फाइनल अपील (1972), पृष्ठ 550।

(बहस) की जो प्रक्रिया है वह इंगलैंड की पद्धति और अमरीका के सुप्रीम कोर्ट द्वारा अपनाई गई पद्धति के बीच समझौता करके अपनाई गई प्रक्रिया प्रतीत होती है। अपील-खंड द्वारा अपील की सुनवाई करने से चार दिन पहले काउन्सेल को अवश्य ही "तर्क के शीर्षकों" को प्रस्तुत कर देना चाहिए जिनमें उन प्रतिपादनाओं और नजीरों का पूरा सारांश ही जिनका अवलम्ब लिया गया है। मौखिक तर्क के लिए समय की कोई सीमा नहीं है किन्तु काउन्सेल से यह आशा की जाती है कि वह "तर्क के शीर्षकों" की केवल अनुपूर्ति करने तक ही अपने मौखिक तर्क को सीमित रखेगा और उसे न्यायालय की इजाजत के बिना अतिरिक्त तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं दी जाएगी।

विधि-लिपिक।

3.22. अब इससे इस अध्याय में उस सिफारिश को दुहराने की आवश्यकता नहीं है जो हम पिछले अध्याय में ऐसे न्यायाधीशों को, जो विधि-लिपिकों की सहायता लेना चाहते हैं, विधि-लिपिक की सेवाएं उपलब्ध कराने के लिए कर चुके हैं।

अध्याय 4

मौखिक तर्क की पद्धति की पूर्ण समाप्ति

प्रश्न 23 के बारे में प्रकट किए गए विचार ।

4.1. हमारी प्रश्नावली के प्रश्न 23 में यह पूछा गया था कि क्या कुछ अपीलों का निपटारा मौखिक तर्क की सुनवाई किए बिना करना चाहिए ? प्रश्नावली से संलग्न नोटों में इओवा के सुप्रीम कोर्ट में अनुसरित की जाने वाली पद्धति के प्रति निर्देश किया गया था ।[1] 1973 में इओवा के सुप्रीम कोर्ट में 66 मामले मौखिक तर्क के बिना प्रस्तुत किए गए थे । 1974 में ऐसे मामलों की संख्या बढ़कर 128 हो गई । जिन मामलों में मौखिक तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति दी गई थी उनमें भी प्रत्येक पक्ष के काउन्सेल को केवल पन्द्रह मिनट का समय और अपीलार्थी द्वारा खंडन करने के लिए पांच मिनट का अतिरिक्त समय दिया गया था । नोटों में इस तथ्य का उल्लेख किया गया था और इस बात पर राय मांगी गई थी कि क्या भारत में ऐसी ही कोई पद्धति समुचित मामलों में अपनायी जा सकती है ?

प्रश्नावली के उत्तर ।

4.2. आयोग द्वारा प्रकाशित प्रश्नावली के जो उत्तर आयोग को प्राप्त हुए हैं वे मौखिक तर्क को पूर्णतया समाप्त करने के किसी प्रस्ताव के पक्ष में नहीं हैं । यदि हम यह कहना चाहें तो कह सकते हैं कि मौखिक तर्क को पूर्णतया समाप्त करने के प्रति अनिच्छा उस राय की प्रवृत्ति के अनुकूल है जो इससे सम्बद्ध इस प्रश्न पर प्रकट की गई है कि क्या समय की दृष्टि से मौखिक तर्क सीमित किया जा सकता है और क्या उसके आंशिक बदले में (आंशिक रूप से उसके स्थान पर) लिखित तर्क त प्रस्तुत करने दिया जाए ?[2] हमने प्रकट की गई इस राय पर सम्यक् ध्यान दिया है और इसलिए हम मौखिक तर्क की पद्धति को पूर्णतया समाप्त करने की सिफारिश नहीं कर रहे हैं । किन्तु इस विषय पर अपनी ठीक-ठीक सिफारिश का कथन करने से पहले संक्षेप में इस विषय के ऐसे एक या दो पहलुओं की चर्चा कर देना वांछनीय है जिनका स्पष्ट रूप से उल्लेख करना आवश्यक है ।

मौखिक तर्क के बिना निपटारा करने के योग्य मामले ।

4.3. हम प्रारम्भ में ही यह कह देना चाहते हैं कि कम से कम इतना तो माना जा सकता है कि ऐसे कुछ मामलों का अनुमान करना सम्भव है जिनमें समुचित रूप से तैयार किए गए पक्षसार (या मामले के कथन भी) विवाद के विभिन्न पहलुओं को ठीक-ठीक बताने के लिए पर्याप्त होंगे । ऐसे बहुत से विवाद हैं जिनका विस्तार बहुत ही सीमित होता है और जिनके अलग-अलग मुद्दों पर सम्पूर्ण रूप से विचार उच्च न्यायालयों के विनिश्चयों में हो चुका हो जिससे उच्च न्यायालय का मुख्य कार्य अब इतना ही रह गया हो कि वह अपना निश्चयात्मक निर्णय सुनाकर विवादग्रस्त मुद्दे के बारे में विधि निश्चित कर दे । ऐसा निश्चयात्मक निर्णय सुनाया जाना (उपर्युक्त प्रकार के मामलों में) मौखिक तर्क के बिना सम्भव होगा । जैसा कि हमने कहा है, जब विवाद के विभिन्न पहलू भलीभांति परिनिश्चित किए गए हैं तब मौखिक तर्क की कोई भी आवश्यकता नहीं हो सकती । एक उदाहरण जो ध्यान में आता है, वह इस सीमित प्रश्न के बारे में है (यद्यपि यह संवैधानिक विधि के क्षेत्र का नहीं है) कि क्या मानहानि के सिविल दायित्व के प्रयोजन के लिए भारतीय विधि में अपमान-लेख (लिबेल) और अपमान-वचन (स्लैन्डर) के बीच कोई भेद माना गया है ? यह प्रश्न इस विषय पर इंगलैंड की विधि की स्थिति के कारण उठता है । भारत में अत्यन्त बहुसंख्यक विनिर्णयों (रूलिंग्स) में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि इन दोनों के बीच कोई भेद नहीं है किन्तु बहुत थोड़े से न्यायाधीशों की न्यायिक राय में इन दोनों के बीच भेद माना गया है । यदि उच्चतम न्यायालय में इस प्रश्न पर कभी विचार किया जाता है तो ऐसे लिखित पक्षकार, जिनमें इस प्रश्न के पक्ष और विपक्ष में सुसंगत नजीरें और सामाजिक विधिक तर्क दिए गए हों, उच्चतम न्यायालय को मौखिक तर्क की आवश्यकता के बिना निश्चयात्मक निर्णय सुनाने के लिए समर्थ बनाने में पर्याप्त होने चाहिए । कुछ न्यायालयों के विनिश्चयों में इस विषय पर विस्तार से अच्छी तरह विचार किया गया है ।

---

1. माननीय मार्क, मैकारमिक, "अपेलेट कन्जेशन इन डैंक इओवा : डाइमेंशन्स एण्ड रेमेडीज" (1975-76) खण्ड 25 इओवा ला रिव्यू पृष्ठ 188 ।
2. पिछला अध्याय 2-5, विशेष रूप से पैरा 2.10 और पैरा 2.11 ।

अपमान-लेख और अपमान-वचन का जो उदाहरण दिया है उसके बारे में (अपमान-लेख और अपमान-वचन के बीच कल्पित भेद के बारे में) अनेक उच्च न्यायालयों के निर्णयों में इस विषय के लगभग सभी अनुमानयोग्य सुसंगत पहलुओं पर विचार किया गया है। इसके अतिरिक्त, ऐसा शैक्षणिक साहित्य भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है जिसमें इस विषय के पक्ष और विपक्ष की बातें बतायी गई हैं। इस साहित्य में इस विषय की सामाजिक पहलुओं की भी चर्चा की गई है। ऐसी स्थिति में देश के सर्वोच्च (हाइएस्ट) न्यायालय के लिए उपर्युक्त प्रकार की ऐसी सामग्री के आधार पर, जो लिखित पक्षकारों के माध्यम से आसानी से प्रस्तुत की जा सकती है, निश्चयात्मक निर्णय सुनाने में कठिनाई नहीं होगी।

डा० मैकछीनी के विचार।

4.4. हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि डा० मैकछीनी ने प्रश्न 23 के अपने उत्तर में ऐसे निपटारे को (मौखिक तर्क के बिना निपटारा) उन मामलों में व्यावहारिक माना है जिनमें वास्तव में कोई पारिणामिक या नए संवैधानिक मुद्दे विवादग्रस्त नहीं हैं।[1]

अन्तिम सुनवाई के बारे में साधारणतया कोई परिवर्तन नहीं।

4.5. किन्तु इसके बारे में अतिबहुसंख्यक उत्तरों में जो कड़ा विरोध प्रकट किया गया है[2] उसे देखते हुए हम यह सिफारिश करना नहीं चाहते कि अपीलों का निपटारा करने में अन्तिम सुनवाई के प्रयोजन के लिए जो वर्तमान पद्धति है उसमें कोई परिवर्तन किया जाए।

ग्रहण-प्रक्रम और मौखिक तर्क, सिफारिशें।

4.6. हमें इसके साथ ही यह भी प्रतीत होता है कि ग्रहण (एडीमशन) के प्रक्रम (स्टेज) पर अधिक कठिनाई के बिना भिन्न दृष्टिकोण अपनाया जा सकता है। ग्रहण के प्रक्रम पर न्यायालय का मुख्य कार्य यह विनिश्चय करना है कि उसके समक्ष जो सामग्री प्रस्तुत की गई है उसके आधार पर क्या वह मामला प्रत्यक्षतः ऐसा प्रतीत होता है कि न्यायालय की अधिकारिता के अधीन उस पर विचार किए जाने की प्रार्थना न्यायोचित है? इस विवाद्यक का विनिश्चय करने के लिए मामला/अपील के कथन के रूप में समुचित रूप से प्रस्तुत लिखित तर्क, जो इस रिपोर्ट में परिकल्पित तरीकों के अनुसार तैयार किए गए हों, बहुसंख्यक मामलों में पर्याप्त होंगे। जिन न्यायाधीशों को, मामला अपील ग्रहण करने के प्रश्न का निर्णय करना है उन्हें यह विनिश्चय करना होगा कि क्या वे सम्बद्ध पक्षकार से मौखिक तर्क प्रस्तुत करने की मांग करें या क्या मामला या अपील ग्रहण करने का प्रश्न केवल लिखित तर्क के आधार पर विनिश्चित किया जा सकता है? इसमें कोई सन्देह नहीं कि मामला या अपील ग्रहण किए जाने के विरुद्ध विनिश्चय करने से न्यायाधीश (जब यह प्रश्न उच्चतम न्यायालय के समक्ष उठाया जाता है तब) मुकदमा ही वस्तुतः एक ही बार हमेशा के लिए समाप्त कर देंगे (वर्तमान प्रयोजन के लिए निर्णय के पुनर्विलोकलन के आपवादिक उपचार की बात को इस समय छोड़ दें तब)। किन्तु हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यदि उच्चतम न्यायालय में बकाया मामलों की संख्या को नियंत्रित करने का गम्भीर प्रयास किया जाता है तो ऐसा ही कुछ परिवर्तन करना अनिवार्य होगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अर्जी (पिटीशन) या अपील को ग्रहण के प्रक्रम पर मौखिक तर्क सुने बिना खारिज कर देने से मुकदमा करने वाले व्यक्ति को और कई मामलों में विधिज्ञ-वर्ग (बार) के सदस्यों को असन्तोष हो सकता है। इस सम्भाव्य परिणाम के होते हुए भी हम यह सिफारिश करते हैं कि उच्चतम न्यायालय में किसी मामले या अपील के (जिसमें संवैधानिक विषय का मामला/अपील भी है) ग्रहण के प्रक्रम पर न्यायालय मौखिक तर्क की सुनवाई करना छोड़ सकता है जब तक कि वह किसी विशेष मामले में न्याय के हित की दृष्टि से ऐसी सुनवाई करना आवश्यक न समझे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऐसे परिवर्तन को समुचित रूप से क्रियान्वित करने के लिए उचित तंत्र (मशीनरी) का गठन करना आवश्यक होगा, जैसे कि ग्रहण-समिति या समितियां जो यह विनिश्चय करें कि क्या मामला या अपील मौखिक तर्क के बिना या उसके सुने जाने के बाद ग्रहण या नामंजूर की जाए।

अमरीका, इंग्लैंड और कनाडा में पद्धति।

4.7. उपर्युक्त सिफारिश के सन्दर्भ में यह उल्लेख किया जा सकता है कि अमरीका का सुप्रीम कोर्ट और इंगलैंड का हाउस आफ लार्ड्स अपनी अपनी निर्णय-सूची (डाकेटों) का कार्य न्यायाधीशों द्वारा मामलों के ग्रहण किए जाने पर कठोर नियंत्रण रख कर पूरा कर देते हैं। अमरीका के सुप्रीम कोर्ट के न्यायमूर्ति श्री जैक्सन ने निम्नलिखित संप्रेक्षण किया है :—

"मामलों की संख्या को अन्तिम न्यायालय के सामर्थ्य के अनुसार नियंत्रित रखने के लिए इस देश (अमरीका) में जो तरीका व्यावहारिक या स्वीकार्य है वह यह है कि मध्यवर्ती

1. डा० एडवर्ड मैकछीनी का उत्तर तारीख 18-1-1984 जो भारत के विधि आयोग के सदस्य-सचिव को भेजा गया है।
2. पिछला पैरा 4.2।

(इन्टरमीडिएट) अपील-न्यायालयों को इस बात की इजाजत दी जाए कि वे ऐसे मामलों को, जो केवल उनके पक्षकारों के लिए महत्वपूर्ण हैं, अन्तिम रूप से तय कर दें। इससे अन्तिम न्यायालय के पास वे ही प्रश्न निर्णय किए जाने के लिए रह जाते हैं जिनके बारे में निचले न्यायालयों में मतभेद है या जो विधि के लिए साधारण महत्व के हैं।[1]

कनाडा के सुप्रीम कोर्ट को भी कानून द्वारा यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह केवल उन मामलों को चुने और उनका विनिश्चय करे जिनमें वह राष्ट्रीय महत्व के विषय या विधि के महत्वपूर्ण विवाद्यक होने की बात मानता है।[2]

न्यायमूर्ति श्री ब्रैंडीस के विचार।

4.8. इस विषय के बारे में अमरीका के सुप्रीम कोर्ट के न्यायमूर्ति श्री ब्रैन्डीस की राय भी उल्लेखनीय है। इसे पाल ए फ्रेउन्ड ने इस प्रकार स्पष्ट किया है—

"न्यायमूर्ति श्री ब्रैन्डीस सुप्रीम कोर्ट की अधिकारिता को हर तरफ सीमित करने में दृढ़ विश्वास रखते थे और यदि उनके समक्ष किसी मनगढ़न्त दोषपूर्ण कार्य या अन्याय का दिखावा करके न्याय की मांग की जाती थी तो वह उसे ठीक करने के बहकावे में नहीं आते थे। समय तो सदैव अव्यवस्थित रहता ही है लेकिन वही इसे ठीक करने के लिए जन्म नहीं लिए थे। सरशियोरेराई के लिए पिटीशनों में की गई शिकायतों की जांच बड़ी शीघ्रता से की जाती थी और यदि उनमें प्रत्यक्षतः ऐसे अनिवार्य कारण नहीं होते थे कि जिनके आधार पर उनको मंजूर किया जाए तो उनको तुरन्त ही इन्कार किए जाने के लिए चिह्नित कर दिया जाता था। वे अपने समय और शक्ति को एसा नियंत्रित करते थे मानो अगला दिन उनके जीवन का अन्तिम दिन होगा। वे अपने को मानव की सेवा में लगे वैज्ञानिक की तरह कठोर बना लेते थे और ऐसी अनगिनत दुःखों से, जिनको दूर करना उनका काम नहीं था, अपना ध्यान भंग नहीं होने देते थे और कभी विचलित नहीं होते थे। उन्हें अधिकारिता सम्बन्धी प्रक्रिया की सीमा के लिए जो चिन्ता रहती है वह तकनीकी स्तर पर प्रकट होती है जो मुख्यतया स्टौइक दर्शनशास्त्र है। इपिकटिटस की भांति वे यह मानते थे कि "जो बात किसी के वश में नहीं है उससे भावनात्मक रूप में प्रभावित होना अनुचित है।"[3]

दाण्डिक अपीलों के बारे में श्री सीरवई के विचार।

4.9. हम श्री एच० एम० सीरवई की उस आलोचना को भी उद्धृत करना चाहेंगे जो उन्होंने हमारे द्वारा प्रकाशित शब्दावली के अपने उत्तर में की है। उन्होंने दाण्डिक अपीलों की चर्चा करते हुए यह कहा है कि संविधान का अनुच्छेद 136 उच्चतम न्यायालय में उस शक्ति को निहित करता है जो प्रिवी कौन्सिल में पहले उस समय निहित थी जब वह ब्रिटिश साम्राज्य में सभी न्यायालयों से अपील का अन्तिम न्यायालय था। यह अवशिष्टीय (रेसिड्यूरी) शक्ति थी जिसका प्रयोग प्रिवी कौंसिल यह देखने के लिए करता था कि न्याय की गम्भीर असफलता का उपचार किया जा सके। उन्होंने इस बात पर जोर देते हुए कि दाण्डिक मामलों में और अन्य मामलों में विशेष इजाजत के लिए आवेदनों में अवश्य ही भेद किया जाना चाहिए यह कहा है[4] कि "दाण्डिक मामलों में प्रिवी कौंसिल बहुत ही कम हस्तक्षेप करती थी, जैसे कि जब तथ्य के बारे में एक ही निष्कर्ष निकाला गया हो और विधि का स्पष्ट रूप से गलत निर्वचन नहीं किया गया हो तब हस्तक्षेप नहीं करता था। प्रिवी कौंसिल अपने को एक अतिरिक्त अपील न्यायालय नहीं समझता था। वह विधि और/या तथ्य के बारे में निकाले गए निष्कर्षों में तभी हस्तक्षेप करता था जब वे तर्क विरुद्ध या अनुचित होते थे जिससे कि अपील किए गए निर्णय को कायम रखने से न्याय की हत्या होती अर्थात् इससे न्याय की आधारशिला ही हिल जाती। अब यह अधिकारिता उच्चतम न्यायालय में निहित है और तर्कबुद्धि तथा कार्यसाधकता की दृष्टि से सब मिलाकर प्रिवी कौंसिल ने जो दृष्टिकोण अपनाया था वही अपनाना चाहिए। इस शक्ति का प्रयोग केवल इस कारण नहीं करना चाहिए कि न्यायाधीश यह महसूस करता है कि कुछ अन्याय हुआ है बल्कि उसे यह देखना चाहिए कि किसी वैयक्तिक मामले में जो अन्याय हुआ है उससे बहुत अधिक अन्याय मुकदमा लड़ने वाले व्यक्तियों के बहुत बड़े वर्ग को उस दशा में होगा जब कि उनके मामलों के विनिश्चय में अनिश्चित काल के लिए विलम्ब होता है और तब उसे

1. राबर्ट एच० जैक्सन : दि सुप्रीम कोर्ट इन दि अमेरिकन सिस्टम आफ गवर्नमेंट (1955), पृष्ठ 21।
2. गेराल्ड गाल, कैनेडियन लीगल सिस्टम, पृष्ठ 70।
3. पाल ए फ्रेउन्ड, आन अन्डरस्टैंडिंग दि सुप्रीम कोर्ट (1950), पृष्ठ 65।
4. श्री एच० एम० सीरवई द्वारा विधि आयोग का प्रश्नावली का उत्तर।

इन दोनों बातों का संतुलन करके उक्त शक्ति का प्रयोग करना चाहिए। मुझे यह प्रतीत होता है कि उच्चतम न्यायालय दाण्डिक अपीलों को ग्रहण करने में, विशेषकर जब कि तथ्यों के बारे में एक ही निष्कर्ष हो, अपने ऊपर अनावश्यक भार डाल रहा है और उचित शीघ्रता से ऐसे मामले निपटाने में असमर्थ होने से अपनी गम्भीर क्षति कर रहा है। यदि सभी न्यायाधीश प्रिवी कौंसिल द्वारा दाण्डिक मामलों में अनुसरित सिद्धान्त का पर्याप्त रूप से पालन करें तो दो फायदे होंगे। यह दाण्डिक मामलों में अनुच्छेद 136 के अधीन आवेदन दिए जाने के लिए हतोत्साहित करेगा और इस तरह प्रति सप्ताह सोमवार और शुक्रवार को न्यायालय का कार्यभार कम हो जाएगा। दूसरा फायदा यह होगा कि अन्तिम सुनवाई के लिए मामले बहुत कम हो जाएंगे और निपटारा जल्दी होगा। कुछ अवसरों पर मामले इस कारण ग्रहण किए जाते हैं कि उनमें दण्डादेश को असम्यक् रूप से कठोर समझा जाता है। ऐसे मामलों में सही रास्ता यह है कि केवल दण्डादेश के विरुद्ध अपील करने की इजाजत दी जाए या यदि यह प्रश्न ग्रहण के प्रक्रम पर निपटाया जा सकता हो तो पक्षकारों की संक्षेप में सुनवाई करने के बाद दण्डादेश को कम कर दिया जाए।"

अध्याय 5

सिफारिशों का संक्षेप

हम इस रिपोर्ट में की गई सिफारिशों का संक्षेप नीचे दे रहे हैं :—

(1) मौखिक तर्क के लिए कोई कठोर या गणित के अनुसार समय की सीमा के लिए सिफारिश नहीं की जा रही हैं। मौखिक तर्क के लिए न्यूनतम समय अवधारित करने का कोई पक्का नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता, किन्तु न्यायालय के लिए दोनों पक्षों की ओर से हाजिर होने वाले काउन्सेल से मौखिक तर्क में लगने वाले उचित रूप से अपेक्षित समय के अनुमान के बारे में मांग करना और उनसे उतना ही समय लेने के लिए अनुरोध करना सम्भव होगा। ऐसा ही रास्ता अपनाने के साथ-साथ मामले का समुचित कथन फाइल किए जाने से सम्बन्धित नियमों के उपबन्धों का पालन करने के लिए न्यायालय द्वारा जोर दिए जाने से न्याय की कोई गम्भीर हानि हुए बिना मामलों के निपटारे की दर में सुधार करने में बहुत सफलता मिलेगा। इस तरह यह विषय, न्यायाधीश की सद्भावना पर छोड़ दिया जा सकता है जो काउन्सेल से परामर्श करके मामले की प्रकृति और तर्क किए जाने वाले विवाद्यकों को ध्यान में रखते हुए पहले ही समय निश्चित कर सकता है। समय निश्चित करने में न्यायाधीश इस तथ्य को भी ध्यान में रख सकता है कि जब लिखित तर्क भली भांति तैयार किए गए हों तब अधिकांश मामलों में मौखिक तर्क में बहुत समय न लिया जाए। यह सुझाव देना कि इस समय की सीमा साधारणतया आध घंटा ही अनुचित होगा। किन्तु मुख्य उद्देश्य मौखिकता को उचित सीमा के अन्दर रखने का होना चाहिए। विधि के किसी प्रारूपिक संशोधन की परिकल्पना नहीं की जा रही है किन्तु यह सिफारिश की जा रही है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में ऐसी पद्धति बनाई जानी चाहिए और उसका अनुसरण किया जाना चाहिए।[1]

(2) विधि-लिपिक (ला क्लर्क) उपलब्ध कराने की पद्धति का पूरी तरह परीक्षण किया जाना चाहिए। इसका प्रारम्भ उच्चतम न्यायालय के उन न्यायाधीशों को विधि-लिपिक उपलब्ध करा कर किया जा सकता है जो उन्हें रखना चाहें। विधि-लिपिक न्यायाधीशों के साथ लगाए जाने चाहिए और उन्हें केवल न्यायालय के साथ नहीं लगाना चाहिए।

उच्चतम न्यायालयों को ऐसे विषयों, जैसे कि विधि-लिपिकों की क्या अहताएं हों, उनका उचित पारिश्रमिक कितना हो, वे कितने समय के लिए नियुक्त किए जाएं और प्रशासनिक प्रकृति के अन्य सम्बन्धित विषय की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी सौंप देनी चाहिए।[2]

विधि-लिपिकों की संस्था जटिल मामलों में उच्च न्यायालयों के लिए भी उपयोगी हो सकती हैं।

(3) कम से कम वर्तमान समय के लिए सभी मामलों में लिखित तर्क फाइल किए जाने की अनिवार्य अपेक्षा को लागू करने की सिफारिश नहीं की जा रही है। किन्तु यदि "मामले का कथन" फाइल किए जाने की युक्ति को समुचित रूप से क्रियान्वित किया जाए तो समय की दृष्टि से मौखिक तर्क में कमी करने या मौखिक तर्क को समुचित दिशा प्रदान करने और प्रत्यक्ष सुसंगति के मुख्य विवाद्यकों पर ध्यान आकृष्ट करने में बहुत सफलता मिलनी चाहिए जिससे स्वतः समय बच जाएगा। अतः यह सिफारिश है कि मामले/अपील के कथन को काउन्सेल द्वारा समुचित रूप में तैयार किए जाने और न्यायालय में फाइल किए जाने पर जोर दिया जाना चाहिए। यदि काउन्सेल आवश्यक समझते हों तो उन्हें लिखित पक्षसार (ब्रीफ) फाइल करने की अनुमति दी जा सकती है और यह स्वभाविक बात है कि लिखित तर्क मामले/अपील के कथन से अधिक विस्तृत होंगे।

---

1. पिछला पैरा 2.11।
2. पिछला पैरा 2.12।

लिखित पक्षसार फाइल किए जाने के समय अवश्य ही उतना ही लम्बा होना चाहिए जितना उचित हो अन्यथा न्यायाधीशों को पक्षसार पढ़ने में बहुत समय लग जाएगा ।[1]

यह सिफारिश निम्नलिखित न्यायालयों में लागू किए जाने के लिए है:—

(क) उच्चतम न्यायालय, और

(ख) उच्च न्यायालयों में ऐसी प्रथम अपीलों/मृत्यु दंड के मामलों और अन्य जटिल मामलों के बारे में जो उच्च न्यायालयों के समक्ष प्रस्तुत किए जाएं ।

(4) संवैधानिक प्रश्न वाले मामलों के बारे में ऐसे पक्षसार, जिनमें लिखित रूप में तथ्य सम्बन्धी सामग्री हो, फाइल करने की पद्धति को बढ़ावा देना चाहिए । अमरीका में जिस पक्षसार (ब्रीफ) को "ब्रैन्डीस ब्रीफ" कहते हैं वह संवैधानिक न्यायनिर्णयन के लिए बहुत उपयोगी हैं । ऐसे पक्षसार में संवैधानिक न्यायनिर्णयन के लिए सुसंगत तथ्य होने चाहिए (पक्षकारों की ओर से फाइल किए गए शपथपत्रों के अतिरिक्त), और जब कभी समुचित हो तब पक्षसार में ऐसे उद्धरण भी होने चाहिए जो समितियों या आयोगों द्वारा प्रकाशित रिपोर्टों से लिए गए हों । यह पद्धति उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में भी अपनायी जा सकती हैं ।[2]

(5) संवैधानिक मामलों में, जब कभी सम्भव हो, तथ्यों का ऐसा कथन फाइल किया जाना चाहिए जिनके बारे में दोनों पक्षकारों की सहमति हो, जिससे कि सुनवाई के समय में कमी की जा सके । यह पद्धति उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में भी अपनाई जा सकती है ।[3]

(6) उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों का आपस में सम्मेलन करने के लिए, जहां तक सम्भव हो, अलग से एक दिन निश्चित कर दिया जाए । उच्च न्यायालयों में पूर्ण न्यायपीठ द्वारा सुनवाई किए जाने वाले मामलों के बारे में यह पद्धति उच्च न्यायालयों में भी अपनाई जा सकती है ।[4]

(7) उच्चतम न्यायालय में किसी मामले या अपील के (जिसके अन्तर्गत ऐसा मामला/अपील भी है जिसमें संवैधानिक विषयों से सम्बन्धित प्रश्न उठाए गए हों), ग्रहण किए जाने के प्रक्रम (स्टेज) पर न्यायालय मौखिक सुनवाई करना छोड़ सकता है अर्थात् नहीं कर सकता है, किन्तु तब जब कि वह ऐसी सुनवाई को विशेष मामलों में न्याय के हित में आवश्यक नहीं समझता हो । इसके लिए वर्तमान प्रणाली के स्थान पर एक ऐसा उचित तंत्र (मशीनरी) स्थापित करना अपेक्षित होगा [जैसे ग्रहण-समिति (एडमिशन कमेटी) या समितियां] जो यह विनिश्चय करे कि क्या उस मामले/अपील को मौखिक तर्क की सुनवाई किए बिना ग्रहण या नामंजूर किया जाना चाहिए ।[5]

(के० के० मैथ्यू),
अध्यक्ष
(जे० पी० चतुर्वेदी),
सदस्य
(डा० एम० बी० राव),
सदस्य
(पी० एम० बख्शी),
अंशकालिक सदस्य
(वेपा० पी० सारथी),
अंशकालिक सदस्य
(ए० के० श्रीनिवासमूर्ति),
सदस्य-सचिव

तारीख .....

1. पिछला पैरा 3.14।
2. पिछला पैरा 3.15।
3. पिछला पैरा 3.18।
4. पिछला पैरा 3.19।
5. पिछला पैरा 4.6।

परिशिष्ट

अमरीका में लिखित पक्षसार

इस परिशिष्ट में अमरीका में लिखित पक्षसार (रिटेन ब्रीफ) की स्थिति की संक्षेप में चर्चा करने का विचार है। इस विशेष विषय की चर्चा करने से पहले अमरीका में न्यायालय के ढांचे का संक्षिप्त विवरण दे देने से आसानी होगी।

अमरीका में न्यायालय का ढांचा

अमरीका में न्यायालय के ढांचे में जटिलता इस कारण है कि वहां स्वशासी राज्यों की ऐसी अधिकारिताओं की बहुलता है जो संघीय (फेडरल) विधिक पद्धति को अतिव्याप्त (ओवरलैप) करती हैं। यद्यपि अमरीकी विधिक पद्धति इंग्लैंड के कामन ला पर मूलतः स्थापित है फिर भी अमरीका के लिखित संविधान में शक्तियों के दृढ़ पृथक्करण और "सम्यक् प्रक्रिया (ड्यू प्रोसेस)" जैसे स्वतंत्रतावादी उपबंधों के प्रतिष्ठापन तथा लगभग दो शताब्दियों की स्वतंत्रता के परिणाम स्वरूप ऐसी पद्धति का विकास हुआ है जो समकालीन ब्रिटेन की पद्धति के समान नहीं है। सम्भवतः ये अन्तर सुप्रीम कोर्ट द्वारा संविधान के अनुकूल कार्य करने से और निर्णितानुसरण (स्टारे डेसिस) के सिद्धान्त के सम्बन्ध में पूर्णतया भिन्न दृष्टिकोण अपनाने से अत्यन्त स्पष्ट रूप में दर्शित होते हैं।[1]

जहां तक राज्य की अधिकारिकताओं का सम्बन्ध है, **पचास राज्यों में से केवल अठारह राज्यों में अपील-न्यायालय के दो स्तर हैं।** वे राज्य, जिनमें दो अपील-न्यायालय हैं,—अलबामा, एरिजोना, कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा, जार्जिया, इलिनाय, इंडियाना, लुसियाना, मिशीगन, मिसौरी, न्यू जेरेसी, न्यू मेक्सिको, न्यूयार्क, ओहियो, ओकोहामा (केवल दाण्डिक अपीलें), पेनसलवानियां, टेनेसी और टैक्सास। किन्तु यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि सभी प्रमुख राज्यों में दो स्तर की पद्धति है और उपर्युक्त अठारह राज्यों की जनसंख्या अमरीका की जन संख्या के सत्तर प्रतिशत से कम नहीं है। सर्वेक्षण-आंकड़ों से (जो तीन स्तर वाले न्यायालयों के केवल ग्यारह राज्यों के बारे में उपलब्ध हैं) यह दर्शित होता है कि पांच राज्यों में दूसरे स्तर के अपील न्यायालयों में सभी प्रवर्ग के मामलों में साधिकार अपील की जा सकती है और अन्य दो राज्यों में सभी अन्तिम अपीलें इजाजत दी जाने पर ही की जा सकती हैं और चार राज्यों[2] में केवल कुछ प्रवर्गों के मामलों में साधिकार अपील की जा सकती है।

संघीय अपील-पद्धति भी बुनियादी तौर पर दो स्तर की है। ग्यारह जिला संघीय अपील-न्यायालय प्रथम स्तर की अपील अधिकारिता का प्रयोग करता हैं। अन्तिम अपील[3] अमरीका के सुप्रीम कोर्ट में होती है जिसे न केवल संघीय न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध अपीलों पर विचार करने की अधिकारिता है बल्कि राज्य न्यायालयों से ऐसे मामलों में अपील पर भी विचार करने की अधिकारिता प्राप्त है जिनमें पर्याप्त रूप से संघीय विषय अन्तर्ग्रस्त हों।

अमरीका के सुप्रीम कोर्ट में साधिकार अपील साधारणतया नहीं की जा सकती किन्तु ऐसी अपील न्यायालय द्वारा सरशियोरेराई की अर्जी मंजूर की जाने के अधीन है। अपवाद के रूप में (जिनमें साधिकार अपील की जा सकती है) ऐसी अपीलें होती हैं जो किसी राज्य के कानून को संविधान, सन्धियों या अमरिकी विधियों के विरुद्ध होने के मामलों में की जाती हैं, किन्तु न्यायालय इन मामलों की सावधानीपूर्वक जांच सुनवाई की मंजूरी देने से पहले करता है।[2]

---

1. ब्लूम कूपर एण्ड ड्रेवरी, फाइनल अपील (1972) पृष्ठ 53।
2. ब्लूम कूपर एण्ड ड्रेवरी, फाइनल कोर्ट अपील (1972) पृष्ठ 53-54।
3. पुनः सुनवाई के लिए सुप्रीम कोर्ट में पिटीशन देने के लिए एक-एक उपबन्ध हैं लेकिन यह बहुत ही कम बार मंजूर की जाती है

तर्क प्रस्तुत किया जाना

सुप्रीम कोर्ट में तर्क प्रस्तुत किए जाने को लागू होने वाले नियम हाउस आफ लार्ड्स की प्रक्रिया के विपरीत है और यह एक रूचिकर विषय है। अमरीका में ऐसे मुद्रित पक्षसार (ब्रीफ) दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए जाने पर जोर दिया जाता है जो विस्तृत (और महंगे) होते हैं। ये ीफ हाउस आफ लार्ड्स में प्रयोग किए जाने वाले "मामले (कैसेज)" से अधिक विस्तृत दस्तावेजें होती है। लगभग सदैव मौखिक तर्क, जो ब्रीफ की अनुपूर्ति करते हैं, प्रत्येक पक्ष की ओर से एक घंटे के लिए सीमित होते हैं। अपवाद के रूप में न्यायालय संक्षिप्त तर्क के लिए अतिरिक्त समय या नियत समय की इजाजत दे सकता है और एसी दशा में प्रत्येक पक्ष को तीस मिनट की इजाजत दी जाएगी। हाउस आफ लार्डस में लम्बे मौखिक तर्क में बहुत समय नजी ों और कानूनों को पढ़ने में लगाया जाता है। जब कि अमरिका का सुप्रीम कोर्ट उन अधिवक्ताओं (एडवोकेटों) से जो तैयार की हुई सामग्री पढ़ते हैं, अपनी अत्याधिक अप्रसन्नता प्रकट करता है। चाहे जो भी स्थिति हो, अमरिका की अधिकारिता में निर्णयज विधि (केस ला) पर बहुत कम जोर डाला जाता है।[1]

अमरीका में अपील के लिए पक्षसार (ब्रीफ) :

अमरीका में अपीलों का फाइल किया जाना

अमरीका में अपील की प्रक्रिया में पक्षसार (ब्रीफ) एक अत्यन्त महत्वपूर्ण दस्तावेज है। इसमें ऐसे विधिक तर्क होते है जिनके आधार पर एक पक्षकार अपनी यह दलील पेश करता है कि निचले न्यायालय के विनिश्चय को या तो उलट देना चाहिए या उसे कायम रखना चाहिए। कुछ अपीलों का विनिश्चय पक्षसार की विषयवस्तुओं के आधार पर किया जाता है क्योंकि मौखिक तर्क की सुनवाई या तो पक्षकारों के अनुरोध पर या न्यायालय की स्वप्रेरणा से नहीं की जा सकती है। ऐसे पैनल में जिसे अपील में मामले का विनिश्चय करने का कार्य सौंपा गया है, तीन, पांच, सात या नौ न्यायाधीश हो सकते हैं। यह बात न्यायालय या मामले पर निर्भर करती है कि पैनल में कितने न्यायाधीश हों। अपील के लिए संघ-न्यायालय (फेडरल कोर्ट) में सामान्य रूप से तीन सदस्यों का पैनल होता है। असाधारण परिस्थितियों में न्यायालय के सभी न्यायाधीश **एक साथ बैठ सकते हैं**, जिसका अर्थ यह होता है कि एक पैनेल, जिसमें उस न्यायालय के सभी न्यायाधीश हों, मामले की सुनवाई करेगा।[2]

पक्षसार की अनेक प्रतियां न्यायालय के लिपिक (क्लर्क) के यहां फाइल की जाने की अपेक्षा की जाती है जिससे कि प्रत्येक न्यायाधीश अपने लिए प्रति प्राप्त कर सके। इस पक्षसार में प्रत्येक अटर्नी का उन प्रश्नों के बारे में कथन होता है जिनका विनिश्चिय न्यायालय पुनर्विलोकन करके करता है, अटर्नी यह बताता है कि वह उसके बारे में न्यायालय द्वारा क्या कार्रवाई कराना चाहता है और अत्यन्त महत्व-पूर्ण बात यह है कि उसमें अटर्नी द्वारा अपनी स्थिति (पक्ष) का समर्थन करने के लिए उस पक्षसार में प्रामाणिक स्रोतों, जैसे कि न्यायालय के पूर्व विनिश्चयों के दृष्टांतों और विधिक सन्धियों के, प्रति साधारणतया निर्देश किए जाते हैं। अतः अटर्नी द्वारा किए गए विधिक अनुसन्धान और अपनी स्थिति का सुसंगत प्रामाणिक समर्थन बहुत महत्वपूर्ण होता है।[2]

अपीलार्थी के पक्षसार को प्रतिवादी पर अवश्य तामील किया जाना चाहिए जिसे अपना पक्षसार तैयार करने और न्यायालय के क्लर्क के यहां फाइल करने के लिए तीस दिन का समय दिया जाता है। अपीलर्थी को प्रतिवादी के पक्षसार के उत्तर में दूसरा पक्षसार फाइल करने का विकल्प प्राप्त हैं।

दोनों पक्षकारों में से किसी पक्षसार द्वारा अपना पक्षसार फाइल करने में असफल होने का परिणाम उसके मामले के लिए घातक हो सकता है। यदि अपीलार्थी उस समय के अन्दर, जो उसे दिया गया है, अपना पक्षसार फाइल करने में असफल रहता है तो प्रतिवादी अपील खारीज किए जाने के लिए आवेदन कर सकता है। यदि प्रतिवादी अपना पक्षसार फाइल करने में असफल रहता है तो विशेष अनुमति प्राप्त किए बिना न्यायालय के समक्ष मौखिक तर्क में भाग नहीं ले सकता।

---

1. ब्लूम कूपर एण्ड ड्रेवरी, फाइनल अपील (1972) पृष्ठ 54।
2. कोल्स एण्ड मेयर, लीगल सिस्टम (1978) पृष्ठ 207।

पक्षसार की विषयवस्तु

पक्षसार को अपेक्षित विषयवस्तु के अन्तर्गत निम्नलिखित सामग्री होती है :—

1. पुनर्विलोकन के लिए न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए जाने वाले विधिक विवाद्यकों का कथन।
2. मामले का संक्षिप्त इतिहास, तथ्य, कार्यवाहियां और विचारण-न्यायालय द्वारा किया गया निपटारा।
3. अपीलार्थी के तर्क, दलीलें और उनका समर्थन करने वाले तर्क-आधार।
4. अपील में मांगी गई राहत का कथन[1]।

नमूना

एक अमरीकी पुस्तक में पक्षसारों के निम्नलिखित नमूने दिए गए हैं[2]।

प्ररूप 11-4—अपीलार्थी का पक्षसार

ग्रेट स्टेट के सुप्रीम कोर्ट में ग्रेट स्टेट राज्य प्रतिवादी बनाम हार्वे वर्कर अपीलार्थी	अपीलार्थी के लिए पक्षसार

विषयवस्तु की सारिणी

मामलों की सारिणी

पुनर्विलोकन के लिए प्रस्तुत किए गए प्रश्न

1. अपीलार्थी को गिरफ्तारी के वारण्ट के बिना 8.20 रात में पुलिस मुख्यालय ले जाया गया और वहां बुकिंग की प्रशासनिक कार्रवाई करने के बाद पुलिस ने अपीलार्थी से तब तक पूछताछ की संस्वीकृति (इकबाल) न प्राप्त कर ली गई जिसके परिणामस्वरूप अपीलार्थी को मजिस्ट्रेट के समक्ष दस बजे रात तक पहली बार हाजिर होने में विलम्ब हुआ। क्या यह विलम्ब, जो अपीलार्थी की गिरफ्तारी और उसकी पहली हाजिरी के बीच हुआ है, ग्रेट स्टेट रूल्स आफ क्रिमिनल प्रोसिडियौर की धारा 118 के अर्थान्तर्गत अनावश्यक और अनुचित था जिससे अपीलार्थी की संस्वीकृति और उससे उत्पन्न होने वाला साक्ष्य विवरण में अग्राह्य हो जाता है?

2. जब विधिक काउन्सिल की उपस्थिति के बिना पुलिस ने अपीलार्थी से पूछताछ की थी और जब अपीलार्थी अपनी गिरफ्तारी के समय शारीरिक दुर्व्यवहार किए जाने के बाद आशंकित रहता था और ऐसी परिस्थितियों में वह पुलिस को दिए गए अपने कथन (बयान) की कानूनी पेचीदगियों को न तो समझता था और न उनका मूल्यांकन कर सकता था तब क्या अपीलार्थी की संस्वीकृति में उस "स्वेच्छा" का अभाव होने से, जिसकी अपेक्षा **मिरान्डा बनाम एरिजोना**, 384 यू०एस० 436 (1966) के मामले में की गई थी, वह संस्वीकृति और उससे निकलने वाला साक्ष्य अग्राह्य हो जाता है।

3. जब विचारण-न्यायालय ने प्रतिरक्षा (सफाई) के काउन्सेल के इस आवेदन को कि साक्ष्य दबा दिया जाए, नामंजूर करते समय प्रतिरक्षा के काउन्सेल के कथनों को तुच्छ कहा था तब क्या न्यायालय द्वारा बीच में ऐसी टिप्पणी करने से अपीलार्थी से मामले पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और उस न्यायालय से निष्पक्ष तथा पूर्वाग्रह रहित अधिकरण के रूप में कार्य करने की जो मूल आवश्यकता है वह क्या पूरी नहीं हुई जिससे कि प्रतिवादी को उचित तथा निष्पक्ष विचारण से वंचित होना पड़ा और क्या यह ऐसी गलती है जिसे बदल कर ठीक कर देना चाहिए ?

---

1. कोलस एण्ड मेयर, लीगल सिस्टम (1978), पृष्ठ 207।
2. कोलस एण्ड मेयर, लीगल सिस्टम (1978) पृ० 329-442।

इतिहास

यह लोकल काउन्टी, ग्रेट स्टेट के क्रिमिनल कोर्ट के 1920 की सं० 1246 में आदेश द्वारा तीन वर्ष की अधिकतम अवधि के कारावास का दण्डादेश अधिरोपित किए जाने के विरुद्ध सीधे की गई अपील है। क—दाण्डिक दोषसिद्धि की परिस्थितियां।

लोकल काउन्टी, ग्रेट स्टेट के क्रिमिनल कोर्ट में 1920 की सं० 1246 में अपीलार्थी को सैंधमारी और चोरी के अपराध करने के आरोप में दोषसिद्ध किया गया था।

अपीलार्थी की गिरफ्तारी और उसके घर की तलाशी लेने के बाद जो साक्ष्य एकत्र हुआ था उसे साक्ष्य को दबाए रखने के लिए आवेदन 10 जुलाई, 1920 को दिया गया। न्यायाधीश होमर ग्रान्ट के समक्ष सुनवाई की जाने के बाद अपीलार्थी का आवेदन, जो साक्ष्य को दबा देने के लिए था, 15 जुलाई 1920 को नामंजूर कर दिया गया।

अपीलार्थी की ओर से हेनरी ला महोदय वकील थे और अपीलार्थी ने सभी आरोपों के बारे में अपने को दोषी न होने की दलील पेश की। 28 अगस्त, 1920 को न्यायाधीश वूल्फ और बारह सदस्यों की जूरी के समक्ष विचारण प्रारम्भ हुआ। बाब बैरिस्टर महोदय अभियोजन-पक्ष के अटर्नी थे। 29 अगस्त, 1920 को जूरी ने अपीलार्थी को सैंधमारी और चोरी के अपराध के लिए दोषी पाया।

3 अक्तूबर, 1920 को अपीलार्थी को लिटल टाउन करेक्शन सेन्टर में तीन मास की अधिकतम अवधि का कारावास भुगतने के लिए दण्डादिष्ट किया गया।

प्रस्तुत अपील के तथ्यों का निम्नलिखित सारांश संक्षेप और सही-सही रूप में दिया जाता है :—

20 मई, 1920 को अपीलार्थी बिग सिटी पुलिस द्वारा 7.30 बजे अपराह्न में गिरफ्तार किया गया,

ख—विचारण के पश्चात् आवेदन

29 अगस्त, 1920 को माननीय विचारण-न्यायालय ने अपीलार्थी को नया विचारण किए जाने के लिए और गिरफ्तारी के बारे में निर्णय दिए जाने के लिए आवेदन फाइल करने की इजाजत दी जिसे अपीलार्थी ने 4 सितम्बर, 1920 को फाइल किया। न्यायपीठ के माननीय न्यायमूर्ति होमर ग्रान्ट, रिचर्ड रो और शिर्लेवूल्फ ने एक साथ बैठकर अपीलार्थी के उस आवेदन की सुनवाई करने के पश्चात्, जो नया विचारण किए जाने के लिए और गिरफ्तारी के बारे में निर्णय दिए जाने के लिए था, उसे 16 सितम्बर, 1920 को नामंजूर कर दिया। 3 अक्तूबर, 1920 को अपीलार्थी को अधिक से अधिक तीन वर्ष के कारावास के लिए दण्डादिष्ट किया गया। आपके माननीय न्यायालय में अपीलार्थी की ओर से अपील 13 अक्तूबर, 1920 को फाइल की गई।

तर्क (बहस)

1. मामले की परिस्थितियों में गिरफ्तारी और अपीलार्थी की पहली बार की हाजिरी के बीच का विलम्ब ग्रेट स्टेट रूल्स आफ क्रिमिनल प्रोस्यूड्योर की धारा 118 के अर्थान्तर्गत अनावश्यक और अनुचित था जिससे अपीलार्थी की संस्वीकृति और उससे उत्पन्न होने वाला साक्ष्य विचारण में अग्राह्य हो जाता है।

ग्रेट स्टेट रूल्स आफ क्रिमिनल प्रोस्यूड्योर की धारा 118 का आदेश स्पष्ट है, "जब प्रतिवादी वारन्ट के बिना गिरफ्तार किया गया हो तब उसे अनावश्यक विलम्ब के बिना उस समुचित न्यायिक प्राधिकारी के समक्ष ले जाया जाएगा जिसके यहां उसके विरुद्ध परिवाद (कम्पैलैन्ट) फाइल किया जाएगा।" इसके सम्बन्ध में आपके माननीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि "गिरफ्तारी और पहली बार की हाजिरी के बीच अनावश्यक विलम्ब के दौरान प्राप्त सभी साक्ष्य अग्राह्य हैं, सिवाय उस साक्ष्य के जिसका उस विलम्ब से किसी प्रकार का उचित सम्बन्ध नहीं है।" (यहां सुसंगत मामले उध्दृत किए गए हैं)।

प्रस्तुत मामले में मजिस्ट्रेट के समक्ष अपीलार्थी की पहली बार की हाजिरी में विलम्ब गिरफ्तारी और बुकिंग से सम्बन्धित प्रशासनिक प्रक्रिया पूरी कर लिए जाने के पश्चात् हुआ था। यह विलम्ब, जो लगभग एक घंटे का था, मजिस्ट्रेट के उपलब्ध न होने के कारण नहीं हुआ था। बल्कि इस समय का उपयोग पुलिस द्वारा अपीलार्थी से पूछताछ करने में हुआ जो काउन्सेल की उपस्थिति के बिना और अपीलार्थी की उस दशा में की गई थी जब वह गिरफ्तारी के बाद पुलिस द्वारा शारीरिक "दुर्व्यवहार" किए जाने के कारण आशंकित था और जो अपीलार्थी से उसे अपराध में फंसाने वाला कथन प्राप्त करने के बाद समाप्त हुई थी।

गिरफ्तार किए गए व्यक्ति से उसे अपराध में फंसाने वाला कथन प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए विलम्ब की अनुमति नियम 118 के अधीन स्पष्ट रूप से नहीं दी गई है जैसा कि इस नियम का अर्थ **ग्रेट स्टेट बनाम फ्ट्च** में किया गया था जिसमें आपके माननीय न्यायालय ने 447 जी०एस० 392 में **एडेम्स बनाम यूनाइटेड स्टेट्स,** 399 एफ सैकेण्ड, 574, 579 (डी०सी०सर० 1968 सहमति प्रकट करने वाली राय) से इस बात के लिए निम्नलिखित उद्धरण दिया था कि गिरफ्तारी और पहली बार की हाजिरी के बीच अनुमति योग्य विलम्ब कितना हो :

आवश्यक विलम्ब का उचित रूप में सम्बन्ध उस प्रशासनिक प्रक्रिया से हो सकता है जो अभियुक्त की बुकिंग करने, उसकी अंगुलियों की छाप लेने और अन्य कार्यवाहियों के कारण हो और कभी-कभी अभियुक्त का उस अपराध से, जिसके लिए वह गिरफ्तार किया गया है, संसक्त होने के बारे में सीमित प्रारम्भिक अन्वेषण करने के कारण हो, विशेषकर उस दशा में **जब कि यह अन्वेषण गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को निरपराध घोषित करने की सम्भावना का पता लगाने के लिए किया जाए।** (अपनी ओर से जोर देने के लिए रेखांकित) ।

प्रस्तुत मामले में एक सौ मिनट के लिए निरोध (डिटेन्शन) और पहली बार की हाजिरी से पहले विलम्ब न तो "अभियुक्त के संबंध में प्रशासनिक प्रक्रिया करने में एकमात्र कारण से और न गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को निरपराध घोषित करने का पता लगाने" के कारण से हुआ था बल्कि इस एक घण्टे के विलम्ब का उपयोग अपराध में फंसाने वाला कथन प्राप्त करने के लिए किया गया था। ऐसा विलम्ब नियम 118 के शब्दों के अनुसार न तो आवश्यक और न उचित कहा जा सकता है। इस तरह यह उस नियम की अपेक्षाओं का स्पष्ट उल्लंघन प्रकट करता है और विलम्ब के परिणामस्वरूप प्राप्त किसी भी साक्ष्य को अवश्य ही अपवर्जित कर देना चाहिए ।

2.....

3.....

निष्कर्ष

उपर्युक्त कारणों से अपीलार्थी यह निवेदन करता है कि निचले न्यायालय के अधिमत और निर्णय को अवश्य उलट देना चाहिए ।

सादर प्रस्तुत

789, मेन स्ट्रीट,
बिग सिटी, ग्रेट स्टेट

अमरीका में निर्णयों की तैयारी की प्रक्रिया

यूनाइटेड किंगडम में ला लार्ड अपनी अत्यन्त वैयक्तिक राय प्रकट करते हैं जो उनके सहयोगी न्यायधिशों के बीच परिचालित की जाती है, किन्तु अमरीका के सुप्रीम कोर्ट द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में औपचारिक रूप से न्यायिक सम्मेलन और बहुत से सामूहिक निर्णय किए जाते हैं। इन सम्मेलनों में बहुत ही हाल के मामलों के बारे में प्रयोगात्मक निष्कर्ष निकाले जाते हैं और न्यायालय के निर्णय के लिखने का कार्य किसी विशिष्ट सहयोगी न्यायमूर्ति को या मुख्य न्यायमूर्ति को ही सौंप दिया जाता है। पहले ही से प्रारूपित और परिचालित निर्णय को प्रकाशन के लिए औपचारिक रूप से अनुमोदित किया जाता है। (सम्बद्ध न्यायमूर्ति बहुमत वाले निर्णय के सहयोगी न्यायाधिशों के निकट सहयोग से यह कार्य करता है) फिर भी किसी न्यायाधीश या न्यायाधिशों के ग्रूप को अलग-अलग अपनी सहमति या विसम्मति प्रकट करने की छुट प्राप्त है और केवल पच्चीस प्रतिशत ऐसे मामले होते हैं जिन में न्यायालय द्वारा उनके गुणदोषों पर विचार करके सर्वसम्मति प्रकट की जाती है[1] ।

1. ब्लूम कूपर एण्ड ड्रेवरी, फाइनल कोर्ट आफ अपील (1972), पृष्ठ 54 ।

भा०स०मु०ना०—वि० 3—221 एल०ए०डी०(एन०डी०)184—4-4-85—250

अप्रैल, 1984 में भारत के विधि आयोग के निन्यानवें रिपोर्ट का शुद्धिपत्र

पृष्ठ सं०	धारा	पंक्ति	के स्थान पर	पढ़ें
विषय सूची		4	2. मौखिक तर्क (जबानी बहस) को सीमित करना	2. मौखिक तर्क (जबानी बहस) को सीमित किया जाना
1.	1.2.	3	"प्रश्न 21–22.	"प्रश्न 21.
2.	पादटिप्पण 2	2	प्रस्ताव संसंबंधित	प्रस्ताव से संबंधित
3.	2.1.	1	उध्दृत	उद्धृत
3.	2.1	6	टिप्पना	टिप्पणों
4.	2.4 दूसरा पैरा	1	न्यायाधीशों	न्यायाधीशों
4.	2.4 दूसरा पैरा	5	खिलाफ।[3]	खिलाफ हैं।[3]
4.	पादटिप्पण 4.	1	फाइल सं०	फाइल क्र० सं०
5.	2.6	2	यहां पूण	यहां पूर्ण
5.	2.7 पार्श्वशीर्ष	1	मौ सीरवई	श्री सीरवई
5.	2.7 (ख)	9	तुरत वाद हो	तुरन्त बाद ही
5.	पादटिप्पण 2	2	सं० क्र० 145	क्र० सं० 145
6.	2.7(ख)	1	काउन्तल या काउन्सलों	काउन्सेल या काउन्सेलों
6.	पादटिप्पण 1	1	फाइल सं०	फाइल क्र० सं०
7.	2.9 "प्रश्न 21."	2	ब्रिटिश पॅटेन	ब्रिटिश पेटेंट
7.	2.9 दूसरा पैरा	3	निम्मलिखित	निम्नलिखित
8.	2.10. दूसरा पैरा	1	मामला	मामले
8.	2.11. पार्श्वशीर्ष	1	श्रीखिक	मौखिक
9.	2.13. दूसरा पैरा	2	अर्थशास्त्रीय	अर्थशास्त्रीय
10.	मध्यशीर्ष	..	पक्षसार	पक्षसार (ब्रीफ)
10.	पादटिप्पण 4	1	फाइल सं० 137	फाइल क्र० सं० 137
11.	3.7.	3	जाएग	जाएगा
11.	पादटिप्पण 4	1	वि आ ग	विधि आयोग
12.	3.8 पार्श्वशीर्ष	1	महाधिवक्त	महाधिवक्ता
12.	3.12 दूसरा पैरा	1	उत्तर "हों"	उत्तर "हां"
14.	3.16	3	सुप्र म कोर्ट	सुप्रीम कोर्ट
14.	3.16	4	कार्यादिवस	कार्यदिवस
14.	3.16 दूसरा पैरा	8	जाती ह	जाती हैं
15.	3.20 दूसरा पैरा	5	हाउस आफ लाईस	हाउस आफ लार्ड्स
17.	4.2	5	लिखितर्क त	लिखित तर्क
19.	4.8. दूसरा पैरा	2	रखते थ	रखते थे
19.	4.8 दूसरा पैरा	8	एसा	ऐसा
19.	4.8 दूसरा पैरा	9	और ऐसी	और ऐसे
20.	4.9	12	दण्डादश	दण्डादेश
23.	परिशिष्ट	11	निर्णितानुसरण (स्टारे डेसिस)	निर्णीतानुसार (स्टोर डेसिसिस)
23.	परिशिष्ट पांचवा पैरा	4	अमरिकी विधियों के विरुद्ध ोने	अमरीकी विधियों के विरुद्ध होने
24.	परिशिष्ट पहला पैरा	3	ये ीफ	ये ब्रीफ
24.	परिशिष्ट पहला पैरा	8	नजीों	नजीरों
24.	परिशिष्ट पहला पैरा	9	अमरिका	अमरीका
25.	परिशिष्ट		न्यायाधिशों	न्यायाधीशों

भा०स०मु०—वि 3—221 एल. ए. डी. (एन. डी.)/84—3-12-1985—250.

PLD. 92. XCIX (H)
250—1984 (DSK-IV)

मूल्य : (देश में) रु० 45 (विदेश में) पौंड 5.25 या 16 डालर 20 सेंटस्

प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, नासिक द्वारा मुद्रित तथा
प्रकाशक-निदेशक, भारत सरकार, सिविल लाइंस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
1985